सूरतुल मायदा

तम्हीदी कलिमात

सूरतुल मायदा से क़ुरान मजीद की दूसरी मंज़िल का आगाज़ होता है, लेकिन क़ुरान हकीम के मक्की और मदनी सूरतों के जो ग्रुप्स हैं, उनके ऐतबार से पहला ग्रुप अभी ख़त्म नहीं हुआ, बल्कि सूरतुल मायदा इस ग्रुप की आखरी सूरत है। इन ग्रुप्स की तफ़सील क़ब्ल अज़ बयान हो चुकी है। उनमें से पहला ग्रुप एक मक्की सूरत (अल् फ़ातिहा) और चार मदनी सूरतों (अल् बक़रह, आले इमरान, अन्निसा और अल् मायदा) पर मुश्तमिल है। मज़ामीन की मुनास्बत के ऐतबार से सूरतुल मायदा का "जोड़ा" सूरतुन्निसा के साथ बनता है। इन दोनों सूरतों का अस्लूब भी काफ़ी हद तक आपस में मिलता-जुलता है, अलबत्ता यहाँ ज़्यादा ज़ोर अहले किताब पर है। इस ग्रुप की मदनी सूरतों (अल् बक़रह, आले इमरान, अन्निसा और अल् मायदा) के बुनियादी मौज़ूआत दो हैं, यानि अहले किताब पर इत्मामे हुज्जत और अहकामे शरीअते इस्लामी। इन सूरतों में इन दोनों मौज़ूआत का एक तसल्सुल है जो तदरीजन नज़र आता है। लिहाज़ा शरीअते इस्लामी का जो इब्तदाई ख़ाका हमें सूरतुल बक़रह में मिलता है और फिर सूरह आले इमरान और सूरतुन्निसा में इसके खद्दो-खाल मज़ीद वाज़ेह हुए हैं, यहाँ सूरतुल मायदा में आकर यह तकमीली रंग इख़्तियार करता नज़र आता है। यही वजह है कि मआशरे की बुलन्दतरीन (हुकूमती) सतह के अहकाम भी हमें इस सूरत में मिलते हैं। इसी तरह अहले किताब से जिस ख़िताब की इब्तदा सूरतुल बक़रह में हुई थी, यहाँ आकर वह भी फ़ैसलाकुन मरहले में दाख़िल हो चुका है।

सूरतुन्निसा का आगाज़ "يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ" से हुआ था, जबकि सूरतुल मायदा का आगाज़ "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا" के अल्फ़ाज़ से हो रहा है।

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

आयात 1 से 5 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَوْفُوْا بِالْعُقُوْدِ ؕ اُحِلَّتْ لَكُمْ بَهِيْمَةُ الْاَنْعَامِ اِلَّا مَا يُتْلٰى
عَلَيْكُمْ غَيْرَ مُحِلِّي الصَّيْدِ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ ؕ اِنَّ اللّٰهَ يَحْكُمُ مَا يُرِيْدُ ① يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ
اٰمَنُوْا لَا تُحِلُّوْا شَعَآئِرَ اللّٰهِ وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ وَلَا الْهَدْيَ وَلَا الْقَلَآئِدَ وَلَآ آٰمِّيْنَ
الْبَيْتَ الْحَرَامَ يَبْتَغُوْنَ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرِضْوَانًا ؕ وَاِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوْا ؕ وَلَا
يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ اَنْ صَدُّوْكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اَنْ تَعْتَدُوْا ۘ وَتَعَاوَنُوْا
عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى ۚ وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ
الْعِقَابِ ② حُرِّمَتْ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةُ وَالدَّمُ وَلَحْمُ الْخِنْزِيْرِ وَمَآ اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِهٖ
وَالْمُنْخَنِقَةُ وَالْمَوْقُوْذَةُ وَالْمُتَرَدِّيَةُ وَالنَّطِيْحَةُ وَمَآ اَكَلَ السَّبُعُ اِلَّا مَا ذَكَّيْتُمْ ۖ
وَمَا ذُبِحَ عَلَى النُّصُبِ وَاَنْ تَسْتَقْسِمُوْا بِالْاَزْلَامِ ؕ ذٰلِكُمْ فِسْقٌ ؕ اَلْيَوْمَ يَئِسَ
الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ دِيْنِكُمْ فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِ ؕ اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ
وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا ؕ فَمَنِ اضْطُرَّ فِيْ مَخْمَصَةٍ
غَيْرَ مُتَجَانِفٍ لِّاِثْمٍ ۙ فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ③ يَسْئَلُوْنَكَ مَاذَآ اُحِلَّ لَهُمْ ؕ قُلْ اُحِلَّ
لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ ۙ وَمَا عَلَّمْتُمْ مِّنَ الْجَوَارِحِ مُكَلِّبِيْنَ تُعَلِّمُوْنَهُنَّ مِمَّا عَلَّمَكُمُ اللّٰهُ ۫
فَكُلُوْا مِمَّآ اَمْسَكْنَ عَلَيْكُمْ وَاذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهِ ۠ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ سَرِيْعُ
الْحِسَابِ ④ اَلْيَوْمَ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ ؕ وَطَعَامُ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ حِلٌّ لَّكُمْ ۖ
وَطَعَامُكُمْ حِلٌّ لَّهُمْ ۖ وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الْمُؤْمِنٰتِ وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الَّذِيْنَ
اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ اِذَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ مُحْصِنِيْنَ غَيْرَ مُسٰفِحِيْنَ وَلَا

مُتَّخِذِيْٓ اَخْدَانٍ ۭ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِالْاِيْمَانِ فَقَدْ حَبِطَ عَمَلُهٗ وَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ۝

आयत 1

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَوْفُوْا بِالْعُقُوْدِ ۭ

"ऐ अहले ईमान! अपने अहदो पैमान (क़ौल व क़रार) को पूरा किया करो।"

उक़्द गिरह को कहते हैं जिसमें मज़बूती से बंधने का मफ़हूम शामिल है। लिहाज़ा "عُقُود" से मुराद वह मुआहिदे हैं जो बाक़ायदा तय पा गये हों। मुआहिदों और क़ौल व क़रार की अहमियत यूँ समझ लीजिये कि हमारी पूरी की पूरी समाजी व मआशरती ज़िन्दगी क़ायम ही मुआहिदों पर है। मआशरती ज़िन्दगी का बुनियादी यूनिट एक खानदान है, जिसकी बुनियाद एक मुआहिदे पर रखी जाती है। शादी क्या है? मर्द और औरत के दरमियान एक साथ ज़िन्दगी गुज़ारने का मुआहिदा है। इस मुआहिदे से इंसानी मआशरे की बुलन्द व बाला इमारत की बुनियादी ईंट रखी जाती है। इस मुआहिदे के मुताबिक़ फ़रीक़ैन के कुछ हुक़ूक़ हैं और कुछ फ़राइज़। एक तरफ़ बीवी के हुक़ूक़ और उसके फ़राइज़ हैं और दूसरी तरफ़ शौहर के हुक़ूक़ और उसके फ़राइज़। बड़े-बड़े कारोबार भी मुआहिदों की शक्ल में होते हैं। आजिर और मुस्ताजिर (Employer & Employee) का ताल्लुक़ भी एक मुआहिदे की बुनियाद पर क़ायम होता है। इसी तरह कारोबारे हुकूमत, हुकूमती इदारों में ओहदे और मनासिब (posts), छोटे-बड़े अहलकारों (कर्मियों) की ज़िम्मेदारियाँ, उनकी मराआत (विचारों) और इख़्तियारात का मामला है। गोया तमाम मआशरती, मआशी और सियासी मामलात क़ुरान हकीम के एक हुक्म पर अमल करने से दुरुस्त सिम्त पर चल सकते हैं, और वह हुक्म है "اَوْفُوْا بِالْعُقُوْدِ"।

اُحِلَّتْ لَكُمْ بَهِيْمَةُ الْاَنْعَامِ اِلَّا مَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ

"तुम्हारे लिये हलाल कर दिये गये हैं मवेशी क़िस्म के तमाम हैवानात, सिवाय इनके जो तुम्हें पढ़ कर सुनाये जा रहे हैं"

जिनका हुक्म आगे चल कर तुम्हें बताया जायेगा, यानि खंज़ीर, मुरदार वगैरह हराम हैं। बाक़ी जो मवेशी क़िस्म के जानवर हैं, वहूश नहीं (मसलन शेर, चीता वगैरह वहशी हैं) वह हलाल हैं, जैसे हिरन, नील गाय और इस तरह के जानवर जो आम तौर पर गोश्त खौर नहीं हैं बल्कि सब्ज़े पर उनका गुज़ारा है, उनका गोश्त तुम्हारे लिये हलाल कर दिया गया है। अलबत्ता इस्तसनाई सूरतों की तफ़सील बाद में तुम्हें बता दी जायेगी।

غَيْرَ مُحِلِّي الصَّيْدِ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ ۭ

"नाजायज़ करते हुए शिकार को जबकि तुम हालते अहराम में हो।"

यानि अगर तुमने हज या उमरे के लिये अहराम बाँधा हुआ है तो तुम इस हालत में इन हलाल जानवरों का भी शिकार नहीं कर सकते।

اِنَّ اللّٰهَ يَحْكُمُ مَا يُرِيْدُ ۝

"बेशक अल्लाह हुक्म देता है जो चाहता है।"

यह अल्लाह का इख़्तियार है, वह जो चाहता है फ़ैसला करता है, जो चाहता है हुक्म देता है।

आयत 2

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحِلُّوْا شَعَاۗىِٕرَ اللّٰهِ وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ

"ऐ अहले ईमान! मत बेहुरमती करो अल्लाह के शआइर (ritual) की और ना हुरमत वाले महीने की"

यानि अल्लाह की हराम करदा चीज़ों को अपनी ख्वाहिश के मुताबिक़ हलाल मत कर लिया करो।

وَلَا الْهَدْیَ — *"और ना हदी के जानवरों की (बेहुरमती करो)"*

यानि क़ुरबानी के वह जानवर जो हज या उमरे पर जाते हुए लोग साथ लेकर जाते थे। अरबों के यहाँ रिवाज था कि वह हज या उमरे पर जाते वक़्त क़ुरबानी के जानवर साथ लेकर जाते थे। यहाँ उन जानवरों की बेहुरमती की मुमानिअत (prohibition) बयान हो रही है।

وَلَا الْقَلَآىِٕدَ — *"और ना (उन जानवरों की बेहुरमती होने पाये) जिनकी गर्दनों में पट्टे डाल दिये गये हों"*

यह पट्टे (क़लादे) अलामत के तौर पर डाल दिये जाते थे कि यह क़ुरबानी के जानवर हैं और काबे की तरफ़ जा रहे हैं।

وَلَآ آٰمِّيْنَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ — *"और ना आज़मीने बैतुल हराम (की इज़्ज़त व अहतराम में फ़र्क़ आये)"*

यानि वह लोग जो बैतुल हराम की तरफ़ चल पड़े हों, हज या उमरे का क़सद करके सफ़र कर रहे हों, अब उनकी भी अल्लाह के घर के साथ एक निस्बत हो गयी है, वह अल्लाह के घर के मुसाफ़िर हैं, जैसा कि अहले अरब हुज्जाजे किराम को कहते हैं: "مَرْحَبًا بِضُيُوْفِ الرَّحْمٰن" "मरहबा उन लोगों को जो रहमान के मेहमान हैं।" यानि तमाम हुज्जाजे किराम असल में अल्लाह के मेहमान हैं, अल्लाह उन तमाम ज़ायरीने काबा का मेज़बान है। तो अल्लाह के उन तमाम मेहमानों की हतके इज़्ज़त (अपमान) और बेहुरमती से मना कर दिया गया।

يَبْتَغُوْنَ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرِضْوَانًا — *"वह तलबगार हैं अपने रब के फ़ज़्ल और उसकी ख़ुशनुदी के।"*

यह सबके सब अल्लाह तआला के फ़ज़्ल और उसकी ख़ुशनुदी की तलाश में निकले हुए हैं, अल्लाह को राज़ी करने की कोशिश में मकाने मोहतरम (काबे) की तरफ़ जा रहे हैं।

وَاِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوْا — *"हाँ जब तुम हलाल हो जाओ (अहराम खोल दो) तो फिर तुम शिकार करो।"*

हलाल हो जाना एक इस्तलाह है, यानि अहराम खोल देना, हालते अहराम से बाहर आ जाना। अब तुम्हें शिकार की आज़ादी है, इस पर पाबन्दी सिर्फ़ अहराम की हालत में थी।

وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ — *"और तुम्हें अमादा ना कर दे किसी क़ौम की दुश्मनी"*

اَنْ صَدُّوْكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ — *"कि उन्होंने रोके रखा तुम्हें मस्जिदे हराम से"*

اَنْ تَعْتَدُوْا — *"कि (तुम भी उन पर) ज़्यादती करने लगो।"*

यानि जैसे अहले मक्का ने तुम लोगों को छ:-सात बरस तक हज व उमरे से रोके रखा, अब कहीं उसके जवाब में तुम लोग भी उन पर ज़्यादती ना करना।

وَتَعَاوَنُوْا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى — *"और तुम नेकी और तक़वा के कामों में तआवुन करो"*

وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ — *"और गुनाह और ज़ुल्म व ज़्यादती के कामों में तआवुन मत करो"*

وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝ — *"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो, यक़ीनन अल्लाह तआला सज़ा देने में बहुत सख़्त है।"*

देखिये यह अंदाज़ बिल्कुल वही है जो सूरतुन्निसा का था, वही मआशरती मामलात और उनके बारे में बुनियादी उसूल बयान हो रहे हैं। अब आ रहे

हैं वह इस्तसनाई अहकाम जिनका ज़िक्र आगाज़े सूरत में हुआ था कि "اِلَّا مَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ"। खाने-पीने के लिये जो चीज़ें हराम क़रार दी गयी हैं उनका ज़िक्र यहाँ आखरी मरतबा आ रहा है और वह भी बहुत वज़ाहत के साथ।

आयत 3

"हराम किया गया तुम पर मुरदार" — حُرِّمَتْ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةُ

वह जानवर जो ख़ुद अपनी मौत मर गया हो वह हराम है।

"और ख़ून और खंज़ीर का गोश्त" — وَالدَّمُ وَلَحْمُ الْخِنْزِيْرِ

"और जिस पर पुकारा गया अल्लाह के सिवा किसी और का नाम" — وَمَآ اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِهٖ

यानि वह जानवर जो अल्लाह के अलावा किसी और के लिये नामज़द है, और गैरुल्लाह का तक़र्रुब हासिल करने के लिये उसको ज़िबह किया जा रहा है।

"और वह जानवर जो गला घुटने से मर गया हो" — وَالْمُنْخَنِقَةُ

"और चोट लगने से जिस जानवर की मौत वाक़ेअ हो गयी हो" — وَالْمَوْقُوْذَةُ

"और जो जानवर किसी ऊँची जगह से गिर कर मर गया हो" — وَالْمُتَرَدِّيَةُ

"और जो जानवर किसी दूसरे जानवर के सींग मारने से हलाक हो गया हो" — وَالنَّطِيْحَةُ

"और जिसे खाया हो किसी दरिन्दे ने" — وَمَآ اَكَلَ السَّبُعُ

यानि "اَلْمَيْتَة" की यह पाँच क़िस्में हैं। कोई जानवर इनमें से किसी सबब से मर गया, ज़िबह होने की नौबत नहीं आयी, उसके जिस्म से ख़ून निकलने का इम्कान ना रहा, बल्कि ख़ून उसके जिस्म के अन्दर ही जम गया और उसके गोश्त का हिस्सा बन गया तो वह मुरदार के हुक्म में होगा।

"मगर यह कि जिसे तुम (ज़िन्दा पाकर) ज़िबह कर लो।" — اِلَّا مَا ذَكَّيْتُمْ

यानि मज़कूरा बाला अक़साम में से जो जानवर अभी मरा ना हो और उसे ज़िबह कर लिया जाये तो उसे खाया जा सकता है। मसलन शेर ने हिरन का शिकार किया, लेकिन इससे पहले कि वह हिरन मरता शेर ने किसी सबब से उसे छोड़ दिया। इस हालत में अगर उसे ज़िबह कर लिया गया और उसमें से ख़ून भी निकला तो वह हलाल जाना जायेगा। जहाँ-जहाँ शेर का मुँह लगा हो वह हिस्सा काट कर फेंक दिया जाये तो बाक़ी गोश्त खाना जायज़ है।

"और वह जानवर जो किसी स्थान पर ज़िबह किया गया हो" — وَمَا ذُبِحَ عَلَى النُّصُبِ

यानि किसी ख़ास आस्ताने पर, ख्वाह वह किसी वली अल्लाह का मज़ार हो या देवता, देवी का कोई स्थान हो, ऐसी जगहों पर जाकर ज़िबह किया गया जानवर भी हराम है।

"और यह कि जुए के तीरों के ज़रिये से तक़सीम करो।" — وَاَنْ تَسْتَقْسِمُوْا بِالْاَزْلَامِ ؕ

यह भी जुए की एक क़िस्म थी। अरबों के यहाँ रिवाज़ था कि क़ुर्बानी के बाद गोश्त के ढेर लगा देते थे और तीरों के ज़रिये गोश्त पर जुआ खेलते थे।

"यह तमाम गुनाह के काम हैं।" ذٰلِكُمْ فِسْقٌ

"अब यह काफ़िर लोग तुम्हारे दीन से मायूस हो चुके हैं" اَلْيَوْمَ يَئِسَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ دِيْنِكُمْ

यानि यह लोग अब यह हक़ीक़त जान चुके हैं कि अल्लाह का दीन ग़ालिब हुआ चाहता है और उसका रास्ता रोकना इनके बस की बात नहीं है। जैसा कि पहले बयान हो चुका है, सूरतुल मायदा नुज़ूल के ऐतबार से आखरी सूरतों में से है। यह उस दौर की बात है जब अरब में इस्लाम के ग़लबे के आसार साफ़ नज़र आना शुरू हो गये थे।

"तो उनसे मत डरो और मुझ ही से डरो।" فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِ

"आज के दिन मैंने तुम्हारे लिये तुम्हारे दीन को कामिल कर दिया है" اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ

"और तुम पर इत्माम फ़रमा दिया है अपनी नेअमत का" وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ

"और तुम्हारे लिये मैंने पसंद कर लिया है इस्लाम को बहैसियत दीन के।" وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا

मेरे यहाँ पसंदीदा और मक़बूल दीन हमेशा-हमेश के लिये सिर्फ़ इस्लाम है।

"लेकिन जो शख्स भूख में मुज़तर (बेहाल) हो जाये (और कोई हराम शय खा ले)" فَمَنِ اضْطُرَّ فِيْ مَخْمَصَةٍ

शदीद फ़ाक़े की कैफ़ियत हो, भूख से जान निकल रही हो तो उन हराम करदा चीज़ों में से जान बचाने के बक़द्र खा सकता है।

"(बशर्ते कि) उसका गुनाह की तरफ़ कोई रुझान ना हो" غَيْرَ مُتَجَانِفٍ لِّاِثْمٍ

नीयत में कोई फ़तूर ना हो, बल्कि हक़ीक़त में जान पर बनी हो और दिल में नाफ़रमानी का कोई ख्याल ना हो।

"तो अल्लाह तआला बख्शने वाला मेहरबान है।" فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

आयत 4

"(ऐ नबी ﷺ!) यह लोग आपसे पूछते हैं कि उनके लिये क्या-क्या हलाल है?" يَسْـَٔلُوْنَكَ مَاذَآ اُحِلَّ لَهُمْ

"आप (ﷺ इन्हें) बतायें कि तुम्हारे लिये सब पाकीज़ा चीज़ें हलाल कर दी गयी हैं" قُلْ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ

"और यह जो तुम सधाते हो शिकारी जानवरों को, फिर छोड़ते हो इनको शिकार के लिये, इन्हें तुमने सिखाया है उसमें से जो अल्लाह ने तुम्हें सिखाया है" وَمَا عَلَّمْتُمْ مِّنَ الْجَوَارِحِ مُكَلِّبِيْنَ تُعَلِّمُوْنَهُنَّ مِمَّا عَلَّمَكُمُ اللّٰهُ

"तो तुम उनके उस शिकार में से खाओ जो वह तुम्हारे लिये रोके रखें" فَكُلُوْا مِمَّآ اَمْسَكْنَ عَلَيْكُمْ

"और उस पर अल्लाह का नाम ले लो।" وَاذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهِ

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो।" وَاتَّقُوا اللّٰهَ

"यक़ीनन अल्लाह बहुत जल्द हिसाब चुकाने वाला है।" إِنَّ اللّٰهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ۝

उसे हिसाब लेने में देर नहीं लगती।

आयत 5

"आज तुम्हारे लिये तमाम पाकीज़ा चीज़ें हलाल कर दी गयी हैं।" اَلْيَوْمَ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ ؕ

यह वही "....اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ" वाला अंदाज़ है। यानि इससे पहले अगर मुख्तलिफ़ मज़ाहिब के अहकाम की वजह से, यहूद की शरीअत या हज़रत याक़ूब अलै० की ज़ाती पसंद व नापसंद की बिना पर अगर कोई रुकावटें पैदा हो गयी थीं या मआशरे में राइज मुशरिकाना रसूमात व अवहाम (अंधविश्वास) की वजह से तुम्हारे ज़हनों में कुछ उलझनें थीं तो आज उन सबको साफ़ किया जा रहा है और आज तुम्हारे लिये तमाम साफ़-सुथरी और पाकीज़ा चीज़ों के हलाल होने का ऐलान किया जा रहा है।

"और अहले किताब का खाना तुम्हारे लिये हलाल है।" وَطَعَامُ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ حِلٌّ لَّكُمْ ۖ

लेकिन यह सिर्फ़ उस सूरत में है कि वह खाना असलन हलाल हो, क्योंकि अगर एक ईसाई सुवर खा रहा होगा तो वह हमारे लिये हलाल नहीं होगा। इस खाने में उनका ज़बीहा भी शामिल है, दो बुनियादी शराइत के साथ: एक यह कि जानवर हलाल हो और दूसरे यह कि उसे अल्लाह का नाम लेकर ज़िबह किया गया हो।

"इसी तरह तुम्हारा खाना भी उनके लिये हलाल है।" وَطَعَامُكُمْ حِلٌّ لَّهُمْ ۖ

"और (तुम्हारे लिये हलाल हैं) अहले ईमान में से खानदानी औरतें" وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الْمُؤْمِنٰتِ

"और खानदानी औरतें उन लोगों की जिनको तुमसे पहले किताब दी गयी थी" وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ

यानि मुस्लमान मर्द ईसाई या यहूदी औरत से शादी कर सकता है।

"जबकि तुम उन्हें अदा कर दो उनके महर" اِذَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ

"क़ैदे निकाह में लाकर उनके मुहाफ़िज़ बनते हुए" مُحْصِنِيْنَ

नीयत यह हो कि तुमने उनको अपने घरों में बसाना है, मुस्तक़िल तौर पर एक खानदान की बुनियाद रखनी है।

"ना कि आज़ाद शहवत रानी के लिये" غَيْرَ مُسٰفِحِيْنَ

"और ना ही चोरी-छुपे आशनाई करने के लिये।" وَلَا مُتَّخِذِيْٓ اَخْدَانٍ ؕ

बल्कि मारूफ़ तरीक़े से अलल ऐलान निकाह करके तुम उन्हें अपने घरों में आबाद करो और उनके मुहाफ़िज़ बनो। इस ज़िमन में बाज़ अशकालात (अश्कालात) का रफ़ा (दूर) करना ज़रूरी है। जहाँ तक शरीअते इस्लामी का हुक्म है तो शरीअत रसूल अल्लाह ﷺ पर मुकम्मल हो चुकी है, अब इसमें तगय्युर व तबद्दुल मुमकिन नहीं। इस लिहाज़ से यह क़ानून अपनी जगह क़ायम है और क़ायम रहेगा। यह तो है इसका जवाज़, अलबत्ता अगर आज इसके ख़िलाफ़ किसी को कोई मसलहत नज़र आती है तो वह अपनी

जगह दुरुस्त हो सकती है, लेकिन इसके बावजूद क़ानून को बदला नहीं जा सकता। अलबत्ता अगर एक ख़ालिस इस्लामी रियासत हो तो हालात की संगीनी के पेशे नज़र कुछ अरसे के लिये किसी ऐसी इजाज़त या हुक्म को मौक़ूफ़ (pause) किया जा सकता है। जैसे हज़रत उमर रज़ि० ने एक मरतबा अपने ज़माने में क़हत के सबब क़तअ यद (हाथ काटने) की सज़ा को मौक़ूफ़ कर दिया था। इस तरह किसी क़ानून में इस्लामी हुकूमत के किसी आरज़ी इन्तेज़ामी हुक्म (executive order) के ज़रिये से कोई आरज़ी तब्दीली की जा सकती है। मज़ीद बराँ इस इजाज़त के पस मंज़र में जो फ़लसफ़ा और हिकमत है उसकी असल रूह को समझना भी ज़रूरी है। यह इजाज़त सिर्फ़ मुस्लमान मर्द को दी गयी है कि वह ईसाई या यहूदी औरतों से शादी कर सकते हैं, मुस्लमान औरत ईसाई या यहूदी मर्द से शादी नहीं कर सकती। इसकी वजह यह है कि आम तौर पर मर्द औरत पर ग़ालिब होता है, लिहाज़ा इम्काने ग़ालिब है कि वह अपनी बीवी को इस्लाम की तरफ़ रागिब कर लेगा। दूसरे यह कि उस ज़माने में यह बात मुसल्लमा (मान्य) थी कि औलाद मर्द की है, और मर्द के ग़ालिब और फ़आल होने का मतलब था कि ऐसे मियाँ-बीवी की औलाद ईसाई या यहूदी नहीं बल्कि मुस्लमान होगी। उस वक़्त वैसे भी मुसलमानों का ग़लबा था और यहूदी और ईसाई उनके ताबेअ हो चुके थे। आज-कल हालात यक्सर तब्दील हो चुके हैं। आज ईसाई और यहूदी ग़ालिब हैं, जबकि मुस्लमान इन्तहाई मग़लूब। दूसरी तरफ बैनुल अक़वामी सियासत में औरतों का ग़लबा है। लिहाज़ा मौजूदा हालात में मसलहत का तक़ाज़ा यही है कि ऐसी शादियाँ ना हों, लेकिन बहरहाल इनको हराम नहीं कहा जा सकता, क्योंकि इसके जवाज़ का वाज़ेह हुक्म मौजूद है। हाँ अगर कोई इस्लामी रियासत कहीं क़ायम हो जाये तो वह आरज़ी तौर पर (जब तक हालात में कोई तब्दीली ना आ जाये) इस इजाज़त को मन्सूख कर सकती है।

وَمَنْ يَّكْفُرْ بِالْاِيْمَانِ فَقَدْ حَبِطَ عَمَلُهٗ

"तो जिस शख्स ने ईमान के साथ कुफ़्र किया उसके तमाम आमाल ज़ाया हो गये"

इसमें इशारा अहले किताब की तरफ़ भी हो सकता है कि जब तक मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ तशरीफ़ नहीं लाये थे तब तक वह अहले ईमान थे लेकिन अब अगर वह नबी आखिरुज़्ज़मान ﷺ पर ईमान नहीं ला रहे तो गोया वह कुफ़्र कर रहे हैं। इसका दूसरा मफ़हूम यह है कि कोई शख्स ईमान का मुद्दई होकर काफ़िराना हरकतें करे तो उसके तमाम आमाल ज़ाया हो जाएँगे।

وَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ۝٥

"और आख़िरत में वह होगा ख़सारा उठाने वालों में।"

आयात 6 से 11 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا قُمْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ فَاغْسِلُوْا وُجُوْهَكُمْ وَاَيْدِيَكُمْ اِلَى
الْمَرَافِقِ وَامْسَحُوْا بِرُءُوْسِكُمْ وَاَرْجُلَكُمْ اِلَى الْكَعْبَيْنِ ۭ وَاِنْ كُنْتُمْ جُنُبًا
فَاطَّهَّرُوْا ۭ وَاِنْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَوْ عَلٰي سَفَرٍ اَوْ جَاۗءَ اَحَدٌ مِّنْكُمْ مِّنَ الْغَاۗىِٕطِ اَوْ
لٰمَسْتُمُ النِّسَاۗءَ فَلَمْ تَجِدُوْا مَاۗءً فَتَيَمَّمُوْا صَعِيْدًا طَيِّبًا فَامْسَحُوْا بِوُجُوْهِكُمْ
وَاَيْدِيْكُمْ مِّنْهُ ۭ مَا يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيَجْعَلَ عَلَيْكُمْ مِّنْ حَرَجٍ وَّلٰكِنْ يُّرِيْدُ لِيُطَهِّرَكُمْ
وَلِيُتِمَّ نِعْمَتَهٗ عَلَيْكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝ وَاذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَمِيْثَاقَهُ
الَّذِيْ وَاثَقَكُمْ بِهٖٓ ۙ اِذْ قُلْتُمْ سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ۡ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌۢ بِذَاتِ
الصُّدُوْرِ ۝ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَاۗءَ بِالْقِسْطِ ۡ وَلَا
يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى اَلَّا تَعْدِلُوْا ۭ اِعْدِلُوْا ۣ هُوَ اَقْرَبُ لِلتَّقْوٰى ۡ وَاتَّقُوا اللّٰهَ
ۭ اِنَّ اللّٰهَ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ۝ وَعَدَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ ۙ لَهُمْ
مَّغْفِرَةٌ وَّاَجْرٌ عَظِيْمٌ ۝ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَآ اُولٰۗىِٕكَ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ۝

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اذْكُرُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ هَمَّ قَوْمٌ اَنْ يَّبْسُطُوْٓا اِلَيْكُمْ
اَيْدِيَهُمْ فَكَفَّ اَيْدِيَهُمْ عَنْكُمْ ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ۝

आयत 6

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا قُمْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ

"ऐ अहले ईमान! जब तुम खड़े हो नमाज़ के लिये"

यानि नमाज़ पढ़ने का क़सद किया करो।

فَاغْسِلُوْا وُجُوْهَكُمْ وَاَيْدِيَكُمْ اِلَى الْمَرَافِقِ

"तो धो लिया करो अपने चेहरे और दोनों हाथ भी कोहनियों तक"

وَامْسَحُوْا بِرُءُوْسِكُمْ

"और अपने सरों पर मसह कर लिया करो"

وَاَرْجُلَكُمْ اِلَى الْكَعْبَيْنِ ۭ

"और (धो लिया करो) अपने दोनों पाँव भी टखनों तक।"

यहाँ पर वाज़ेह रहे कि اَرْجُلِكُمْ और اَرْجُلَكُمْ दोनों क़िरातें मुस्तनद (authentic) हैं, लिहाज़ा अहले तशय्य (शिया) इसको मुस्तक़लन اَرْجُلِكُمْ पढ़ते हैं और उनके नज़दीक इसमें पाँव पर मसह का हुक्म है। चुनाँचे वह {وَامْسَحُوْا بِرُءُوْسِكُمْ وَاَرْجُلِكُمْ} का तर्जुमा इस तरह करते हैं: "और मसह कर लिया करो अपने सरों पर भी और अपने पाँव पर भी।" लेकिन अहले सुन्नत के नज़दीक यह اَرْجُلَكُمْ है और اِلَى الْكَعْبَيْنِ के इज़ाफ़े से यहाँ पाँव को धोने का हुक्म बिल्कुल वाज़ेह हो गया है। अगर सिर्फ़ मसह करना मतलूब होता तो इसमें कोई हद बयान करने की ज़रूरत नहीं थी। लिहाज़ा اِلَى الْكَعْبَيْنِ की शर्त से यह टुकड़ा {فَاغْسِلُوْا وُجُوْهَكُمْ وَاَيْدِيَكُمْ اِلَى الْمَرَافِقِ} के बिल्कुल मसावी (बराबर) हो गया है। जैसे हाथों का धोना है कोहनियों तक, ऐसे ही पाँव का धोना है टखनों तक। इस हुक्म में वुज़ू के फ़राइज़ बयान हुए हैं।

وَاِنْ كُنْتُمْ جُنُبًا فَاطَّهَّرُوْا ۭ

"और अगर तुम हालते जनाबत में हो तो फिर तुम और ज़्यादा पाकी हासिल करो।"

यानि पूरे जिस्म का गुस्ल करो। जनाबत की हालत में नमाज़ पढ़ना या क़ुरान को हाथ लगाना जायज़ नहीं।

وَاِنْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَوْ عَلٰي سَفَرٍ

"और अगर तुम बीमार हो या सफ़र पर हो"

اَوْ جَاۗءَ اَحَدٌ مِّنْكُمْ مِّنَ الْغَاۗىِٕطِ

"या तुम में से कोई किसी नशेबी जगह (शौचालय) से होकर आये"

यह इस्तआरा है क़ज़ाये हाजत के लिये। आम तौर पर लोग क़ज़ाये हाजत के लिये नशेबी जगहों पर जाते थे।

اَوْ لٰمَسْتُمُ النِّسَاۗءَ

"या तुमने औरतों से मुक़ारबत की हो"

فَلَمْ تَجِدُوْا مَاۗءً

"और तुम्हें पानी दस्तयाब ना हो"

فَتَيَمَّمُوْا صَعِيْدًا طَيِّبًا

"तो इरादा कर लो पाक मिट्टी का"

यानि पाक मिट्टी से तयम्मुम कर लिया करो।

فَامْسَحُوْا بِوُجُوْهِكُمْ وَاَيْدِيْكُمْ مِّنْهُ ۭ

"तो उससे अपने चेहरे और हाथों को मल लो।"

"अल्लाह यह नहीं चाहता कि तुम पर कोई तंगी करे" مَا يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيَجْعَلَ عَلَيْكُمْ مِّنْ حَرَجٍ

"बल्कि वह चाहता है कि तुम्हें पाक कर दे" وَّلٰكِنْ يُّرِيْدُ لِيُطَهِّرَكُمْ

"और तुम पर अपनी नेअमत का इत्माम फ़रमाये ताकि तुम शुक्रगुज़ार बन सको।" وَلِيُتِمَّ نِعْمَتَهٗ عَلَيْكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ⑥

आयत 7

"और अल्लाह ने तुम्हें जो अपनी नेअमत अता की है उसको याद रखो और उस मुआहिदे को भी जो उसने तुमसे बाँध लिया है (या जिसमें उसने तुम्हें बाँध लिया है)" وَاذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَمِيْثَاقَهُ الَّذِيْ وَاثَقَكُمْ بِهٖٓ

एक मीसाक़ वह था जो बनी इसराइल से लिया गया था, अब एक मीसाक़ यह है जो अहले ईमान से हो रहा है। चूँकि यह सूरत शुरू हुई थी يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا से, यानि अहले ईमान से ख़िताब है, लिहाज़ा इस मीसाक़ में भी अहले ईमान ही मुख़ातिब हैं।

"जब तुमने कहा था हमने सुना और इताअत क़ुबूल की।" اِذْ قُلْتُمْ سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا

सूरतुल बक़रह की आखरी आयत से पहले वाली आयत में अहले ईमान का यह इक़रार मौजूद है {سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ؕ غُفْرَانَكَ رَبَّنَا وَاِلَيْكَ الْمَصِيْرُ} अब जो मुस्लमान भी سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ؕ कहता है वह गोया एक मीसाक़ और एक बहुत मज़बूत मुआहिदे के अन्दर अल्लाह तआला के साथ बंध जाता है। यानि अब उसे अल्लाह की शरीअत की पाबन्दी करनी है।

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो, यक़ीनन अल्लाह तआला सीने के राज़ों से भी वाक़िफ़ है।" وَاتَّقُوا اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌۢ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ⑦

आयत 8

"ऐ लोगो जो ईमान लाये हो, अल्लाह की खातिर रास्ती पर क़ायम रहने वाले और इन्साफ़ की गवाही देने वाले बन जाओ" يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَآءَ بِالْقِسْطِ

यहाँ पर सूरतुन्निसा की आयत 135 का हवाला ज़रूरी है। सूरतुन्निसा की आयत 135 और ज़ेरे मुताअला आयत में एक ही मज़मून बयान हुआ है, फ़र्क़ सिर्फ़ यह है कि तरतीब अक्सी है (दोनों सूरतों की निस्बते ज़ौजियत मद्देनज़र रहे)। वहाँ अल्फ़ाज़ आये हैं: { يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ شُهَدَآءَ لِلّٰهِ} और यहाँ अल्फ़ाज़ हैं: { يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَآءَ بِالْقِسْطِ ۫}। एक हक़ीक़त तो मैंने उस वक़्त बयान कर दी थी कि इससे यह मालूम हुआ कि गोया "अल्लाह" और "क़िस्त" मुतरादिफ़ हैं। एक जगह फ़रमाया: "क़िस्त के लिये खड़े हो जाओ" और दूसरी जगह फ़रमाया: "अल्लाह के लिये खड़े हो जाओ।" इसी तरह एक जगह "अल्लाह के गवाह बन जाओ" और दूसरी जगह "क़िस्त के गवाह बन जाओ" फ़रमाया। तो गोया "अल्लाह" और "क़िस्त" एक-दूसरे के मुतरादिफ़ के तौर पर आये हैं।

दूसरा अहम नुक्ता इस आयत से हमारे सामने यह आ रहा है कि मआशरे में अद्ल क़ायम करने का हुक्म है। इन्सान फ़ितरतन इन्साफ़ पसंद है। इन्साफ़ आम इन्सान की नफ्सियात और उसकी फ़ितरत का तक़ाज़ा है। आज पूरी नौए इंसानी इन्साफ़ की तलाश में सरगर्दां (हैरान व परेशान) है। इन्साफ़ ही के लिये इन्सान ने बादशाहत से निजात हासिल की और जम्हूरियत को अपनाया ताकि इन्सान पर इन्सान की हाकिमियत ख़त्म हो, इन्साफ़ मयस्सर आये, मगर जम्हूरियत की मंज़िल सराब (भ्रम) साबित

हुई और एक दफ़ा इन्सान फिर सरमाया दाराना निज़ाम (capitalism) की लानत में गिरफ़्तार हो गया। अब सरमायेदार उसके आक़ा और डिक्टेटर बन गये। इस लानत से निजात के लिये उसने कम्युनिज़्म (communism) का दरवाज़ा खटखटाया मगर यहाँ भी मताअलक़ा पार्टी की आमरियत (one party dictatorship) उसकी मुन्तज़िर थी। गोया "रुस्त अज़ यक बंद ता उफ्ताद दर बन्दे दिगर" यानि एक मुसीबत से निजात पायी थी कि दूसरी आफ़त में गिरफ़्तार हो गये। अब इन्सान अद्ल और इन्साफ़ हासिल करने के लिये कहाँ जाये? क्या करे? यहाँ पर एक रोशनी तो इन्सान को अपनी फ़ितरत के अन्दर से मिलती है कि उसकी फ़ितरत इन्साफ़ का तक़ाज़ा करती है और अपनी फ़ितरत के इस तक़ाज़े को पूरा करने के लिये वह अद्ल क़ायम करने के लिये खड़ा हो जाये, मगर इससे ऊपर भी एक मंज़िल है और वह यह है कि "अल् अद्ल" अल्लाह की ज़ात है जिसका दिया हुआ निज़ाम ही आदिलाना निज़ाम है। हम उसके बन्दे हैं, उसके वफ़ादार हैं, लिहाज़ा उसके निज़ाम को क़ायम करना हमारे ज़िम्मे है, हम पर फ़र्ज़ है। चुनाँचे {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَآءَ بِالْقِسْطِ ۫} में उसी बुलन्दतर मंज़िल का ज़िक्र है। यह सिर्फ़ फ़ितरते इन्सानी ही का तक़ाज़ा नहीं बल्कि तुम्हारी अबदियत का तक़ाज़ा भी है। अल्लाह तआला के साथ वफ़ादारी के रिश्ते का तक़ाज़ा है कि पूरी क़ुव्वत के साथ, अपने तमामतर वसाइल के साथ, जो भी असबाब व ज़राय मयस्सर हों उन सबको जमा करके खड़े हो जाओ अल्लाह के लिये! यानि अल्लाह के दीन के गवाह बन कर खड़े हो जाओ। और उस दीन में जो तसव्वुर है अद्ल, इन्साफ़ और क़िस्त का उस अद्ल व इन्साफ़ और क़िस्त को क़ायम करने के लिये खड़े हो जाओ। यह है इस हुक्म का तक़ाज़ा।

अब देखिये, वहाँ (सूरतुन्निसा आयत 135 में) क्या था: "ऐ ईमान वालो! इन्साफ़ के अलम्बरदार और अल्लाह वास्ते के गवाह बन जाओ।" {وَلَوْ عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ اَوِ الْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ ۚ} "अगरचे इसकी (तुम्हारे इन्साफ़ और तुम्हारी गवाही की) ज़द ख़ुद तुम्हारी अपनी ज़ात पर या तुम्हारे वालिदैन या रिश्तेदारों पर ही क्यों ना पड़ती हो।"

इन्साफ़ से रोकने वाले अवामिल में से एक अहम आमिल मुस्बते ताल्लुक़ यानि मोहब्बत है। अपनी ज़ात से मोहब्बत, वालिदैन और रिश्तेदारों वगैरह की मोहब्बत इन्सान को सोचने पर मजबूर कर देती है कि मैं अपने ख़िलाफ़ कैसे फ़तवा दे दूँ? अपने ही वालिदैन के ख़िलाफ़ क्योंकर फ़ैसला सुना दूँ? सच्ची गवाही देकर अपने अज़ीज़ रिश्तेदार को कैसे फाँसी चढ़ा दूँ? लिहाज़ा ".....وَلَوْ عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ" फ़रमा कर इस नौइयत की तमाम अस्बियतों की जड़ काट दी गयी कि बात अगर हक़ की है, इन्साफ़ की है तो फिर ख्वाह वह तुम्हारे अपने ख़िलाफ़ ही क्यों ना जा रही हो, तुम्हारे वालिदैन पर ही उसकी ज़द क्यों ना पड़ रही हो, तुम्हारे अज़ीज़ रिश्तेदार ही उसकी काट के शिकार क्यों ना हो रहे हों, उसका इज़हार बगैर किसी मसलहत के डंके की चोट पर करना है।

इस सिलसिले में दूसरा आमिल मनफ़ी ताल्लुक़ है, यानि किसी फ़र्द या गिरोह की दुश्मनी, जिसकी वजह से इन्सान हक़ बात कहने से पहलुतही कर जाता है। वह सोचता है कि बात तो हक़ की है मगर है तो वह मेरा दुश्मन, लिहाज़ा अपने दुश्मन के हक़ में आखिर कैसे फ़ैसला दे दूँ? आयत ज़ेरे नज़र में इस आमिल को बयान करते हुए दुश्मनी की बिना पर भी कतमाने हक़ (हक़ छुपाने) से मना कर दिया गया:

وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى اَلَّا تَعْدِلُوْا ۭ

"और किसी क़ौम की दुश्मनी तुम्हें इस बात पर अमादा ना कर दे कि तुम अद्ल से मुन्हरिफ़ (बाग़ी) हो जाओ।"

اِعْدِلُوْا ۭ

"अद्ल से काम लो"

هُوَ اَقْرَبُ لِلتَّقْوٰى

"यही क़रीबतर है तक़वे के"

وَاتَّقُوا اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ۝٨

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो। जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह यक़ीनन उससे बाख़बर है।"

तुम्हारा कोई अमल और कोई क़ौल उसके इल्म से ख़ारिज नहीं, लिहाज़ा हर वक़्त चौकस रहो, चौकन्ने रहो। (आयत ज़ेरे नज़र और सूरतुन्निसा की आयत 135 के मायने व मफ़हूम का बाहमी रब्त और अल्फ़ाज़ की अक्सी और reciprocal तरतीब का हुस्न लायक़-ए-तवज्जोह है।)

आयत 9

وَعَدَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ ۙ لَهُمْ مَّغْفِرَةٌ وَّاَجْرٌ عَظِيْمٌ ۝٩

"अल्लाह का वादा है उन लोगों से जो ईमान लाये और नेक अमल करते रहे कि उनके लिये मग़फ़िरत भी है और अज्रे अज़ीम भी।"

आयत 10

وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَآ اُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ۝١٠

"और जिन्होंने इन्कार किया और हमारी आयात को झुठलाया वही लोग जहन्नम वाले हैं।"

आयत 11

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اذْكُرُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ هَمَّ قَوْمٌ اَنْ يَّبْسُطُوْٓا اِلَيْكُمْ اَيْدِيَهُمْ

"ऐ अहले ईमान! ज़रा याद करो अल्लाह के उस ईनाम को जो उसने तुम पर किया जब इरादा किया था एक क़ौम ने कि तुम्हारे ख़िलाफ़ अपने हाथ बढायें"

فَكَفَّ اَيْدِيَهُمْ عَنْكُمْ ۚ

"तो अल्लाह ने उनके हाथों को रोक दिया तुमसे।"

यह गज़वा-ए-अहज़ाब के बाद के हालात पर तबसिरा है। इस गज़वे के बाद अभी कुफ्फ़ार में से बहुत से लोग पेच व ताब खा रहे थे और बईद नहीं था कि वह दो बार मुहिम जोई करते, लेकिन अल्लाह तआला ने ऐसे हालात पैदा कर दिये और उनके दिलों में ऐसा रौब डाल दिया कि वह दोबारा लश्कर कशी की जुर्रात ना कर सके। इस सूरते हाल का ज़िक्र अल्लाह तआला यहाँ पर अपने ईनाम के तौर पर कर रहे हैं कि जब कुफ्फ़ार ने इरादा किया था कि तुम पर दस्तदराज़ी करें, तुम्हारे ऊपर ज़्यादती करने के लिये, तुम पर फ़ौज कशी के लिये इक़दाम करें।

इसमें ख़ास तौर पर इशारा सुलह हुदैबिया की तरफ़ है। उस वक़्त भी क़ुरैश लड़ाई के लिये बेताब हो रहे थे, उनके नौजवानों का खून खौल रहा था, लेकिन बिलआखिर उन्हें इस हक़ीक़त का इदराक (अहसास) हो गया कि अब हम मुसलमानों का मुक़ाबला नहीं कर सकते। गोया अल्लाह तआला ने उनके दिलों में रौब डाल दिया और उनके हाथों को मुसलमानों के ख़िलाफ़ उठने से रोक दिया।

وَاتَّقُوا اللّٰهَ ؕ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ۝١١

"और तुम अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो, और अहले ईमान को तो अल्लाह ही पर तवक्कुल करना चाहिये।"

आयात 12 से 19 तक

وَلَقَدْ اَخَذَ اللّٰهُ مِيْثَاقَ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ ۚ وَبَعَثْنَا مِنْهُمُ اثْنَىْ عَشَرَ نَقِيْبًا ۚ وَقَالَ اللّٰهُ اِنِّيْ مَعَكُمْ ؕ لَئِنْ اَقَمْتُمُ الصَّلٰوةَ وَاٰتَيْتُمُ الزَّكٰوةَ وَاٰمَنْتُمْ بِرُسُلِيْ وَعَزَّرْتُمُوْهُمْ وَاَقْرَضْتُمُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا لَّاُكَفِّرَنَّ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ وَلَاُدْخِلَنَّكُمْ جَنّٰتٍ

وَلَقَدْ اَخَذَ اللّٰهُ مِيْثَاقَ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ ۚ

"और अल्लाह तआला ने बनी इसराइल से भी मीसाक़ लिया था।"

यानि ऐ मुसलमानों! जिस तरह आज तुमसे यह मीसाक़ लिया गया है और अल्लाह ने तुम्हें शरीअत के मीसाक़ में बाँध लिया है, बिल्कुल इस तरह का मीसाक़ अल्लाह तआला ने तुमसे पहले बनी इसराइल से भी लिया था।

وَبَعَثْنَا مِنْهُمُ اثْنَىْ عَشَرَ نَقِيْبًا ۭ

"और उनमें हमने मुक़र्रर किये थे बारह नक़ीब।"

बनी इसराइल के बारह क़बीले थे, हर क़बीले में से हज़रत मूसा अलै० ने एक नक़ीब मुक़र्रर किया। नबी अकरम ﷺ ने भी अन्सार में बारह नक़ीब फ़रमाये थे, नौ ख़जरज में से और तीन औस से।

وَقَالَ اللّٰهُ اِنِّىْ مَعَكُمْ ۭ

"और अल्लाह ने (उनसे) फ़रमाया था कि मैं तुम्हारे साथ हूँ।"

मेरी मदद, मेरी ताइद, मेरी नुसरत तुम्हारे साथ शामिले हाल रहेगी।

لَىِٕنْ اَقَمْتُمُ الصَّلٰوةَ وَاٰتَيْتُمُ الزَّكٰوةَ

"अगर तुमने नमाज़ को क़ायम रखा और ज़कात अदा करते रहे"

وَاٰمَنْتُمْ بِرُسُلِىْ

"और मेरे रसूलों पर ईमान लाते रहे"

وَعَزَّرْتُمُوْهُمْ

"और उन (रसूलों) की तुम मदद करते रहे"

यह जिन रसूलों का ज़िक्र है वह पे-दर-पे बनी इसराइल में आते रहे। हज़रत मूसा अलै० के बाद तो रिसालत का यह सिलसिला एक तार की मानिन्द था जो छ: सौ बरस तक टूटा ही नहीं। फिर ज़रा सा वक़्फ़ा छ: सौ बरस का आया और फिर उसके बाद नबी आखिरुज़्ज़मान ﷺ तशरीफ़ लाये।

تَجْرِىْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ۚ فَمَنْ كَفَرَ بَعْدَ ذٰلِكَ مِنْكُمْ فَقَدْ ضَلَّ سَوَآءَ السَّبِيْلِ ۝١٢
فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِّيْثَاقَهُمْ لَعَنّٰهُمْ وَجَعَلْنَا قُلُوْبَهُمْ قٰسِيَةً ۚ يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ عَنْ
مَّوَاضِعِهٖ ۙ وَنَسُوْا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوْا بِهٖ ۚ وَلَا تَزَالُ تَطَّلِعُ عَلٰى خَاۗىِٕنَةٍ مِّنْهُمْ اِلَّا قَلِيْلًا
مِّنْهُمْ فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاصْفَحْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ۝١٣ وَمِنَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّا
نَصٰرٰٓى اَخَذْنَا مِيْثَاقَهُمْ فَنَسُوْا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوْا بِهٖ ۠ فَاَغْرَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ
وَالْبَغْضَاۗءَ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ۭ وَسَوْفَ يُنَبِّئُهُمُ اللّٰهُ بِمَا كَانُوْا يَصْنَعُوْنَ ۝١٤ يٰٓاَهْلَ
الْكِتٰبِ قَدْ جَاۗءَكُمْ رَسُوْلُنَا يُبَيِّنُ لَكُمْ كَثِيْرًا مِّمَّا كُنْتُمْ تُخْفُوْنَ مِنَ الْكِتٰبِ
وَيَعْفُوْا عَنْ كَثِيْرٍ ۭ قَدْ جَاۗءَكُمْ مِّنَ اللّٰهِ نُوْرٌ وَّكِتٰبٌ مُّبِيْنٌ ۝١٥ يَّهْدِيْ بِهِ اللّٰهُ مَنِ
اتَّبَعَ رِضْوَانَهٗ سُبُلَ السَّلٰمِ وَيُخْرِجُهُمْ مِّنَ الظُّلُمٰتِ اِلَى النُّوْرِ بِاِذْنِهٖ وَيَهْدِيْهِمْ
اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝١٦ لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ ۭ قُلْ
فَمَنْ يَّمْلِكُ مِنَ اللّٰهِ شَيْـــًٔا اِنْ اَرَادَ اَنْ يُّهْلِكَ الْمَسِيْحَ ابْنَ مَرْيَمَ وَاُمَّهٗ وَمَنْ فِي
الْاَرْضِ جَمِيْعًا ۭ وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا ۭ يَخْلُقُ مَا يَشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ
عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝١٧ وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ وَالنَّصٰرٰى نَحْنُ اَبْنٰٓؤُا اللّٰهِ وَاَحِبَّاۗؤُهٗ ۭ قُلْ
فَلِمَ يُعَذِّبُكُمْ بِذُنُوْبِكُمْ ۭ بَلْ اَنْتُمْ بَشَرٌ مِّمَّنْ خَلَقَ ۭ يَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَاۗءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ
يَّشَاۗءُ ۭ وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا وَاِلَيْهِ الْمَصِيْرُ ۝١٨ يٰٓاَهْلَ
الْكِتٰبِ قَدْ جَاۗءَكُمْ رَسُوْلُنَا يُبَيِّنُ لَكُمْ عَلٰي فَتْرَةٍ مِّنَ الرُّسُلِ اَنْ تَقُوْلُوْا مَا
جَاۗءَنَا مِنْۢ بَشِيْرٍ وَّلَا نَذِيْرٍ ۣ فَقَدْ جَاۗءَكُمْ بَشِيْرٌ وَّنَذِيْرٌ ۭ وَاللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝١٩ۧ

अब यहाँ से बनी इसराइल की तारीख के चंद वाक़िआत आ रहे हैं।

"और अल्लाह को क़र्ज़े हसना देते रहे" وَاَقۡرَضۡتُمُ اللّٰهَ قَرۡضًا حَسَنًا

यानि अल्लाह के दीन के लिये माल ख़र्च करते रहे।

"तो मैं लाज़िमन दूर कर दूँगा तुमसे तुम्हारी बुराइयाँ" لَاُكَفِّرَنَّ عَنۡكُمۡ سَيِّاٰتِكُمۡ

"और मैं लाज़िमन दाख़िल कर दूँगा तुम्हें उन बाग़ात में जिनके दामन में नदियाँ बहती होंगी।" وَلَاُدۡخِلَنَّكُمۡ جَنّٰتٍ تَجۡرِىۡ مِنۡ تَحۡتِهَا الۡاَنۡهٰرُ

"तो जिसने कुफ़्र किया इसके बाद तुम में से तो वह सीधे रास्ते से भटक कर रह गया।" فَمَنۡ كَفَرَ بَعۡدَ ذٰلِكَ مِنۡكُمۡ فَقَدۡ ضَلَّ سَوَآءَ السَّبِيۡلِ ﴿۱۲﴾

आयत 13

"पस उनके अपने इस अहद को तोड़ने के बाइस हमने उन पर लानत फ़रमायी" فَبِمَا نَقۡضِهِمۡ مِّيۡثَاقَهُمۡ لَعَنّٰهُمۡ

मैंने सूरतुन्निसा आयत 155 में "لَعَنّٰهُمۡ" महज़ूफ़ क़रार दिया था, लेकिन यहाँ पर यह वाज़ेह होकर आ गया है कि हमने उनके इस मीसाक़ को तोड़ने की पादाश में उन पर लानत फ़रमायी।

"और उनके दिलों को सख्त कर दिया।" وَجَعَلۡنَا قُلُوۡبَهُمۡ قٰسِيَةً

जैसे सूरतुल बक़रह में फ़रमाया: { ثُمَّ قَسَتۡ قُلُوۡبُكُمۡ مِّنۡۢ بَعۡدِ ذٰلِكَ فَهِىَ كَالۡحِجَارَةِ اَوۡ اَشَدُّ قَسۡوَةً } (आयत:74) "फिर तुम्हारे दिल सख्त हो गये उसके बाद, पत्थरों की तरह बल्कि पत्थरों से भी बढ़ कर सख्त।" यहाँ पर वही बात दोहराई गयी है।

"वह कलाम को उसके असल मक़ाम से हटाते थे" يُحَرِّفُوۡنَ الۡكَلِمَ عَنۡ مَّوَاضِعِهٖ

"और जो कुछ उनको दिया गया था नसीहत के तौर पर उसके अक्सर हिस्से को वह भूल गये।" وَنَسُوۡا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوۡا بِهٖ

और उन्होंने उससे फ़ायदा उठाना छोड़ दिया।

"और (ऐ नबी ﷺ) आप हमेशा उनकी तरफ़ से ख्यानत की इत्तलाअ पाते रहेंगे" وَلَا تَزَالُ تَطَّلِعُ عَلٰى خَآئِنَةٍ مِّنۡهُمۡ

रसूल अल्लाह ﷺ जैसे ही मदीने पहुँचे थे तो आप ﷺ ने उस नयी जगह पर अपनी पोज़ीशन मज़बूत करने के लिये पहले छ: महीनों में जो तीन काम किये उनमें से एक यह भी था कि यहूद के तीनों क़बीलों से मदीना के मुश्तरका दिफ़ा के मुआहिदे कर लिये कि अगर मदीने पर हमला होगा तो सब मिल कर इसका दिफ़ा करेंगे, लेकिन बाद में उनमें से हर क़बीले ने एक-एक करके ग़द्दारी की। चुनाँचे नबी अकरम ﷺ से फ़रमाया जा रहा है कि उनकी तरफ़ से मुसलसल ख्यानतें होती रहेंगी, लिहाज़ा आपको उनकी तरफ़ से होशियार रहना चाहिये और उनका तोड़ करने के लिये पहले से तैयार रहना चाहिये।

"सिवाय उनमें से चंद एक के" اِلَّا قَلِيۡلًا مِّنۡهُمۡ

उनमें से बहुत थोड़े लोग इससे मुस्तशना (मुक्त) हैं।

"लिहाज़ा (अभी) आप ﷺ उन्हें माफ़ करते रहें और दरगुज़र से काम लें।" فَاعۡفُ عَنۡهُمۡ وَاصۡفَحۡ

"यक़ीनन अल्लाह तआला अहसान करने वालों को पसंद फ़रमाता है।" إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ﴿١٣﴾

आयत 14

"और जिन लोगों ने कहा हम नसारा हैं, हमने उनसे भी मीसाक़ लिया" وَمِنَ الَّذِينَ قَالُوا إِنَّا نَصَارَىٰ أَخَذْنَا مِيثَاقَهُمْ

"तो वह भी भूल गये बड़ा हिस्सा उसका जिसकी उनको नसीहत की गयी थी।" فَنَسُوا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوا بِهِ

वह उस नसीहत से फ़ायदा उठाना भूल गये।

"तो हमने डाल दी उनके दरमियान दुश्मनी और बुग़्ज़ क़यामत के दिन तक।" فَأَغْرَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَاءَ إِلَىٰ يَوْمِ الْقِيَامَةِ

यहाँ एक अहम नुक्ता तो यह है कि ईसाईयों और यहूदियों के दरमियान पूरे उन्नीस सौ बरस शदीद दुश्मनी रही है। मौजूदा दौर में सूरते हाल आरज़ी तौर पर कुछ तब्दील हो गयी है। ईसाई जिन्हें अल्लाह का बेटा बल्कि ख़ुदा समझते हैं, यहूदियों ने उन्हें वलदुज़्ज़िना क़रार दिया और काफ़िर व मुर्तद कहते हुए वाजिबुल क़त्ल ठहराया। यह बुनियादी इख्तलाफ़ दोनों मज़ाहिब के पैरोकारों में इस क़द्र अहम और शदीद है कि इसकी मौजूदगी में दोनों में इत्तेहाद व इत्तेफ़ाक़ मुमकिन ही नहीं। लेकिन आयत ज़ेरे नज़र में बुनियादी तौर पर ईसाईयों की आपस की दुश्मनी और उनका बाहम बुग़्ज़ व अनाद (विरोध) मुराद है। उनके मुख्तलिफ़ फ़िरक़ों के दरमियान नज़रियाती इख्तलाफ़ात उनकी दिली कदुरतों और नफ़रतों से बढ़ कर बारहा (बार-बार) बाहमी जंग व जदल (झगड़े) की शक्ल में नमूदार होते रहे हैं। मज़हबी बुनियादों पर ईसाई फ़िरक़ों की आपस की खाना जंगियों की मिसाल पूरी इंसानी तारीख में नहीं मिलती। मज़हब के नाम पर ईसाईयों की खूँरेज़ी और क़त्ल व ग़ारतगरी की इबरत आमोज़ और रोंगटे खड़े कर देने वाली तफ़सीलात "Blood on the Cross" नामी ज़खीम किताब में मिलती हैं, जो लन्दन से शाया हुई है। ख़ास तौर पर प्रोटेस्टेंट्स (Protestants) और कैथोलिक्स (Catholics) की बाहमी चप्पलिश तो कोई पोशीदा राज़ नहीं, जिसकी हल्की सी झलक आज भी हमें आयरलैंड में नज़र आती है।

"और अनक़रीब अल्लाह तआला जितला देगा उन्हें जो कुछ वह करते रहे थे।" وَسَوْفَ يُنَبِّئُهُمُ اللَّهُ بِمَا كَانُوا يَصْنَعُونَ ﴿١٤﴾

अब फिर वही अंदाज़ है जो सूरतुन्निसा के आखिर में था।

आयत 15

"ऐ अहले किताब, आ गया है तुम्हारे पास हमारा रसूल" يَا أَهْلَ الْكِتَابِ قَدْ جَاءَكُمْ رَسُولُنَا

"जो ज़ाहिर कर रहा है तुम पर वह बहुत सी बातें जिनको तुम छुपा रहे थे किताब में से" يُبَيِّنُ لَكُمْ كَثِيرًا مِّمَّا كُنتُمْ تُخْفُونَ مِنَ الْكِتَابِ

"और बहुत सी बातों से तो दरगुज़र भी कर रहा है।" وَيَعْفُوا عَن كَثِيرٍ

لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ

"यक़ीनन कुफ़्र किया उन्होंने जिन्होंने कहा कि अल्लाह ही मसीह इब्ने मरयम है।"

हज़रत ईसा अलै० के बारे में ईसाईयों के यहाँ जो अक़ीदे रहे हैं उनमें से एक यह है कि अल्लाह ही मसीह अलै० है। इस अक़ीदे की बुनियाद इस नज़रिये पर क़ायम है कि ख़ुदा ख़ुद ही इन्सानी शक्ल में ज़हूर कर लेता है। इस अक़ीदे को God Incarnate कहा जाता है, यानि अवतार का अक़ीदा जो हिन्दुओं में भी है। जैसे राम चन्द्र जी, कृष्ण जी महाराज उनके यहाँ ख़ुदा के अवतार माने जाते हैं। चुनाँचे ईसाईयों का फ़िरक़ा Jacobites ख़ास तौर पर God Incarnate के अक़ीदे का सख्ती से क़ायल रहा है, कि असल में अल्लाह ही ने हज़रत मसीह अलै० की शक्ल में दुनिया में ज़हूर फ़रमाया। जैसे हमारे यहाँ भी बाज़ लोग नबी अकरम ﷺ की मोहब्बत व अक़ीदत और अज़मत के इज़हार में गुलु से काम लेकर हद से तजावुज़ करते हुए यहाँ तक कह जाते हैं:

वही जो मुस्तवी-ए-अर्श था ख़ुदा होकर
उतर पड़ा वह मदीने में मुस्तफ़ा होकर

ईसाईयों के इसी अक़ीदे का इब्ताल (खंडन) इस आयत में किया गया है।

قُلْ فَمَنْ يَّمْلِكُ مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا

"तो उनसे पूछिये कौन है जिसे इख़्तियार हो अल्लाह के मुक़ाबले कुछ भी"

اِنْ اَرَادَ اَنْ يُّهْلِكَ الْمَسِيْحَ ابْنَ مَرْيَمَ وَاُمَّهٗ

"अगर वह हलाक करना चाहे मसीह अलै० इब्ने मरयम को और उसकी माँ को"

قَدْ جَآءَكُمْ مِّنَ اللّٰهِ نُوْرٌ وَّ كِتٰبٌ مُّبِيْنٌ ۙ﴿۱۵﴾

"आ चुका है तुम्हारे पास अल्लाह की तरफ़ से एक नूर भी और एक रोशन किताब भी।"

यहाँ नूर से मुराद नबी अकरम ﷺ की शख्सियत भी हो सकती है। सूरतुन्निसा आयत 174 में जो फ़रमाया गया: {وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكُمْ نُوْرًا مُّبِيْنًا} "और नाज़िल कर दिया है हमने तुम्हारी तरफ़ एक रोशन नूर" वहाँ नूर से मुराद क़ुरान है, इसलिये कि हुज़ूर ﷺ के लिये फ़अल وَاَنْزَلْنَآ दुरुस्त नहीं। लेकिन यहाँ ज़्यादा अहतमाल (सम्भावना) यही है कि नूर से मुराद रसूल अल्लाह ﷺ की ज़ाते मुबारका है, यानि आप ﷺ की रूहे पुरनूर, क्योंकि आप ﷺ की रूह और रूहानियत आप ﷺ के पूरे वजूद पर ग़ालिब थी, छायी हुई थी। इस लिहाज़ से आप ﷺ को नूरे मुजस्सम भी कहा जा सकता है। गोया आप ﷺ को इस्तआरतन "नूर" कहा गया है। एक अहतमाल यह भी है कि यहाँ नूर भी क़ुरान पाक ही को कहा गया हो और "वाव" इसमें वावे तफ़सीरी हो। इस सूरत में मफ़हूम यूँ होगा: "आ गया है तुम्हारे पास नूर यानि किताबे मुबीन।"

आयत 16

يَّهْدِيْ بِهِ اللّٰهُ مَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَهٗ سُبُلَ السَّلٰمِ

"इसके ज़रिये से अल्लाह तआला रहनुमाई फ़रमाता है उनकी जो उसकी रज़ा के तालिब हैं, सलामती के रास्तों की तरफ़"

وَيُخْرِجُهُمْ مِّنَ الظُّلُمٰتِ اِلَى النُّوْرِ بِاِذْنِهٖ وَيَهْدِيْهِمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ﴿۱۶﴾

"और निकलता है उन्हें अन्धेरों से रोशनी की तरफ़ अपने हुक्म से और उनकी रहनुमाई फ़रमाता है सीधे रास्ते की तरफ़।"

आयत 17

"और जो ज़मीन में हैं उन सबको" وَمَنۡ فِی الۡاَرۡضِ جَمِیۡعًا ؕ

अगर अल्लाह इन सबको हलाक करना चाहे तो कौन है जो उसका हाथ रोक लेगा?

"और अल्लाह ही के लिये है बादशाही आसमानों और ज़मीन की और जो कुछ इन दोनों के दरमियान है (सबकी)।" وَلِلّٰہِ مُلۡکُ السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضِ وَمَا بَیۡنَہُمَا ؕ

"वह पैदा करता है जो कुछ चाहता है।" یَخۡلُقُ مَا یَشَآءُ ؕ

"और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।" وَاللّٰہُ عَلٰی کُلِّ شَیۡءٍ قَدِیۡرٌ ۝۱۷

वह जो चाहता है, जैसे चाहता है, तख्लीक़ फ़रमाता है। उसने आदम, ईसा और याहया (अलै०) को तख्लीक़ फ़रमाया। यह अल्लाह तआला के ऐजाज़े तख्लीक़ की मुख्तलिफ़ मिसालें हैं।

आयत 18

"यहूदी और नसरानी कहते हैं कि हम अल्लाह के बेटे हैं और उसके बड़े चहेते हैं।" وَقَالَتِ الۡیَہُوۡدُ وَالنَّصٰرٰی نَحۡنُ اَبۡنٰٓؤُا اللّٰہِ وَاَحِبَّآؤُہٗ ؕ

यानि बेटों की मानिन्द हैं, बड़े लाड़ले और प्यारे हैं।

"(तो इनसे) कहिये कि फिर वह तुम्हें अज़ाब क्यों देता रहा है तुम्हारे गुनाहों की पादाश में?" قُلۡ فَلِمَ یُعَذِّبُکُمۡ بِذُنُوۡبِکُمۡ ؕ

अगर तुम अल्लाह की औलाद हो, उसके बड़े चहेते हो, तो क्या इसी लिये बख्तनसर (Nebukadnezar) के हाथों उसने तुम्हें पिटवाया, तुम्हारे छ: लाख अफ़राद क़त्ल करवा दिये, छ: लाख क़ैदी बने, तुम्हारा हैकले अव्वल भी शहीद कर दिया गया। फिर आशूरियों ने तुम्हारी सल्तनत इसराइल को रौंद डाला। फिर यूनानियों के हाथों तुम्हारा इस्तहसाल (शोषण) हुआ। फिर रोमियों ने तुम्हारे ऊपर ज़ुल्म व बरबरियत के पहाड़ तोड़े और रोमन जनरल टाइटस (Titus) ने तुम्हारा दूसरा हैकल भी मस्मार कर दिया। क्या ऐसे ही लाड़ले होते हैं अल्लाह के? क्या अल्लाह इतना ही लाचार और आजिज़ है कि अपने लाडलों को ज़िल्लत व ख्वारी और ज़ुल्म व सितम से बचा नहीं सकता?

"(नहीं) बल्कि तुम भी इन्सान हो जैसे दूसरे इन्सान उसने पैदा किये हैं।" بَلۡ اَنۡتُمۡ بَشَرٌ مِّمَّنۡ خَلَقَ ؕ

"वह जिसे चाहता है बख्श देता है और जिसे चाहता है सज़ा देता है।" یَغۡفِرُ لِمَنۡ یَّشَآءُ وَیُعَذِّبُ مَنۡ یَّشَآءُ ؕ

"और अल्लाह ही के लिये है आसमानों और ज़मीन और जो कुछ इन दोनों के दरमियान है, सबकी बादशाही" وَلِلّٰہِ مُلۡکُ السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضِ وَمَا بَیۡنَہُمَا ۫

"और उसी की तरफ़ लौट कर जाना है।" وَاِلَیۡہِ الۡمَصِیۡرُ ۝۱۸

आयत 19

"ऐ अहले किताब! तुम्हारे पास आ चुका है हमारा रसूल" یٰۤاَہۡلَ الۡکِتٰبِ قَدۡ جَآءَکُمۡ رَسُوۡلُنَا

يُبَيِّنُ لَكُمْ عَلٰى فَتْرَةٍ مِّنَ الرُّسُلِ

"जो तुम्हारे लिये (दीन को) वाज़ेह कर रहा है, रसूलों के एक वक़्फ़े के बाद"

हज़रत ईसा अलै० और मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के दरमियान छ: सौ बरस ऐसे गुज़रे हैं कि उस दौरान दुनिया में कोई नबी, कोई रसूल नहीं रहा। इस वक़्फ़े को इस्तलाह में 'फ़ितरत' कहा जाता है। फिर हुज़ूर ﷺ की बेअसत हुई और फिर इसके बाद ता क़यामे क़यामत रिसालत का दरवाज़ा बंद हो गया।

اَنْ تَقُوْلُوْا مَا جَآءَنَا مِنْۢ بَشِيْرٍ وَّلَا نَذِيْرٍ

"मबादा तुम कहो कि हमारे पास तो आया ही नहीं था कोई बशारत देने वाला और ना कोई ख़बरदार करने वाला"

فَقَدْ جَآءَكُمْ بَشِيْرٌ وَّنَذِيْرٌ

"तो (सुन लो!) आ गया है तुम्हारे पास बशारत देने वाला और ख़बरदार करने वाला।"

وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿١٩﴾

"और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।"

सूरतुन्निसा (आयत:165) में यही बात इस अंदाज़ से बयान हो चुकी है: {رُسُلًا مُّبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَي اللّٰهِ حُجَّـةٌۢ بَعْدَ الرُّسُلِ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا}

आयात 20 से 26 तक

وَاِذْ قَالَ مُوْسٰى لِقَوْمِهٖ يٰقَوْمِ اذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ جَعَلَ فِيْكُمْ اَنْۢبِيَآءَ وَجَعَلَكُمْ مُّلُوْكًا ۖ وَّاٰتٰىكُمْ مَّا لَمْ يُؤْتِ اَحَدًا مِّنَ الْعٰلَمِيْنَ ﴿٢٠﴾ يٰقَوْمِ ادْخُلُوا الْاَرْضَ الْمُقَدَّسَةَ الَّتِيْ كَتَبَ اللّٰهُ لَكُمْ وَلَا تَرْتَدُّوْا عَلٰٓى اَدْبَارِكُمْ فَتَنْقَلِبُوْا خٰسِرِيْنَ ﴿٢١﴾ قَالُوْا يٰمُوْسٰٓى اِنَّ فِيْهَا قَوْمًا جَبَّارِيْنَ ۖ وَاِنَّا لَنْ نَّدْخُلَهَا حَتّٰى يَخْرُجُوْا مِنْهَا ۚ فَاِنْ يَّخْرُجُوْا مِنْهَا فَاِنَّا دٰخِلُوْنَ ﴿٢٢﴾ قَالَ رَجُلٰنِ مِنَ الَّذِيْنَ يَخَافُوْنَ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمَا ادْخُلُوْا عَلَيْهِمُ الْبَابَ ۚ فَاِذَا دَخَلْتُمُوْهُ فَاِنَّكُمْ غٰلِبُوْنَ ۚ وَعَلَى اللّٰهِ فَتَوَكَّلُوْٓا اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿٢٣﴾ قَالُوْا يٰمُوْسٰٓى اِنَّا لَنْ نَّدْخُلَهَآ اَبَدًا مَّا دَامُوْا فِيْهَا فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَآ اِنَّا هٰهُنَا قٰعِدُوْنَ ﴿٢٤﴾ قَالَ رَبِّ اِنِّيْ لَآ اَمْلِكُ اِلَّا نَفْسِيْ وَاَخِيْ فَافْرُقْ بَيْنَنَا وَبَيْنَ الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ﴿٢٥﴾ قَالَ فَاِنَّهَا مُحَرَّمَةٌ عَلَيْهِمْ اَرْبَعِيْنَ سَنَةً ۚ يَتِيْهُوْنَ فِي الْاَرْضِ ۗ فَلَا تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ﴿٢٦﴾

अब हज़रत मूसा अलै० का वह वाक़िया आ रहा है जब आप अलै० मिस्र से अपनी क़ौम को लेकर निकले, सहराए सीना में रहे, आप अलै० को कोहे तूर पर बुलाया गया और तौरात दी गयी। इसके बाद उन्हें हुक्म हुआ कि फ़लस्तीन में दाख़िल हो जाओ और वहाँ पर आबाद मुशरिक और काफ़िर क़ौम (जो फ़लस्तई कहलाते थे) के साथ जंग करो और उन्हें वहाँ से निकालो, क्योंकि यह अर्ज़े मुक़द्दस तुम्हारे लिये अल्लाह की तरफ़ से मौऊद (promised) है। इसलिये कि उनके जद्दे अमजद हज़रत इब्राहीम अलै० और हज़रत इस्हाक़ और हज़रत याक़ूब अलै० का ताल्लुक़ इस ख़ित्ते से था। फिर हज़रत याक़ूब अलै० के ज़माने में हज़रत युसुफ़ अलै० की वसातत (ज़रिये) से बनी इसराइल मिस्र में मुन्तक़िल (move) हुए तो उन्हें हुक्म हुआ कि अब जाओ, अपने असल घर (अर्ज़े फ़लस्तीन) को दोबारा हासिल करो। लेकिन जब जंग का मौक़ा आया तो पूरी क़ौम ने कोरा जवाब दे दिया कि हम जंग करने के लिये तैयार नहीं हैं। इस पर हज़रत मूसा अलै० के मिज़ाज में जो तल्ख़ी पैदा हुई और तबीयत के अन्दर बेज़ारी की जो कैफ़ियत पैदा हुई, उसकी शिद्दत यहाँ नज़र आती है। आम तौर पर समझा जाता है कि रसूल अपनी उम्मत के हक़ में सरापा शफ़क़त होता है, लेकिन हक़ीक़त यह है कि नबी का मामला भी अल्लाह तआला की मानिन्द है। जैसे अल्लाह रऊफ़ भी है, वदूद भी, लेकिन साथ ही वह अज़ीज़ुन ज़ुनतिक़ाम भी है (अल्लाह की यह दोनों शानें एक साथ हैं) इसी तरह रसूल

का मामला है कि रसूल शफ़ीक़ और रहीम होने के साथ-साथ गय्यूर भी होता है। नबी के दिल में दीन की गैरत अपने पैरोकारों से कहीं बढ़ कर होती है। लिहाज़ा क़ौम के मनफ़ी रद्दे अमल पर नबी की बेज़ारी लाज़मी है।

यहाँ पर एक बहुत अहम नुक्ता समझने का यह है कि बनी इसराइल को पे-दर-पे मौअज्ज़ात के ज़हूर ने तसाहिल पसंद बना दिया था। प्यास लगी तो चट्टान पर मूसा अलै० की एक ही ज़र्ब से बारह चश्मे फूट पड़े, भूख महसूस हुई तो मन्न व सलवा नाज़िल हो गया, धूप ने सताया तो अब्र का सायबान साथ-साथ चल पड़ा, समुन्दर रास्ते में आया तो असा की ज़र्ब से रास्ता बन गया। ऐसा महसूस होता है कि इस लाड़-प्यार की वजह से वह बिगड़ गये, आराम तलब हो गये, मुश्किल की हर घड़ी में उन्हें मौअज्ज़े के ज़हूर की आदत सी पड़ गयी और जंग के मौक़े पर दुश्मन का सामना करने से इन्कार कर दिया, बावजूद यह कि उनके कम से कम एक लाख अफ़राद तो ऐसे थे जो जंग की सलाहियत रखते थे। यही हिकमत है कि मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की पूरी ज़िन्दगी में इस क़िस्म का कोई मौअज्ज़ा नज़र नहीं आता, बल्कि यह नक़्शा नज़र आता है कि मुसलमानों! तुम्हें जो कुछ करना है अपनी जान देकर, ईसार व क़ुर्बानी से, मेहनत व मशक्क़त से, भूख झेल कर, फ़ाक़े बर्दाश्त करके करना है। चुनाँचे बनी इसराइल के बरअक्स रसूल अल्लाह ﷺ के साथियों में ईसार व क़ुर्बानी, जुर्रात व बहादुरी और बुलन्द हिम्मती नज़र आती है, जिसकी वाज़ेह मिसाल गज़वा-ए-बद्र के मौक़े पर हज़रत मिक़दाद रज़ि० का यह क़ौल है:

يَا رَسُوْلَ اللهِ اِنَّا لَا نَقُوْلُ لَکَ کَمَا قَالَتْ بَنُوْ اِسْرَائِيْلَ لِمُوْسٰى (فَاذْهَبْ اَنْتَ وَ رَبُّکَ فَقَاتِلَا اِنَّا هٰهُنَا قَاعِدُوْنَ) وَلٰکِنِ امْضِ وَ نَحْنُ مَعَکَ، فَکَاَنَّهٗ سُرِّیَ عَنْ رَسُوْلِ اللهِ ﷺ۔

"या रसूल अल्लाह! हम आप ﷺ से बनी इसराइल की तरह यह नहीं कहेंगे कि तुम और तुम्हारा रब जाकर क़िताल करो हम तो यहाँ बैठे हैं। बल्कि (हम कहेंगे) आप ﷺ क़दम बढाइये, हम आप ﷺ के साथ हैं! इस पर गोया रसूल अल्लाह ﷺ की परेशानी का इज़ाला हो गया।"

आयत 20

"और याद करो जब कहा मूसा अलै० ने अपनी क़ौम से" — وَاِذْ قَالَ مُوْسٰى لِقَوْمِهٖ

"ऐ मेरी क़ौम के लोगो! अल्लाह के उस ईनाम को याद करो जो तुम पर हुआ है" — اذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللهِ عَلَيْكُمْ

"जब उसने तुम्हारे अन्दर नबी उठाये" — اِذْ جَعَلَ فِيْكُمْ اَنْۢبِيَآءَ

यानि ख़ुद मैं नबी हूँ, मेरे भाई हारुन नबी हैं। हज़रत युसुफ़, हज़रत याक़ूब, हज़रत इस्हाक़ और हज़रत इब्राहीम अलै० सब नबी थे।

"और तुम्हें बादशाह बनाया" — وَجَعَلَكُمْ مُّلُوْكًا

अगरचे उस वक़्त तक उनकी बादशाहत तो क़ायम नहीं हुई थी मगर हो सकता है कि यह पेशनगोई हो कि आइन्दा तुम्हें अल्लाह तआला ज़मीन की सल्तनत और ख़िलाफ़त अता करने वाला है। चुनाँचे हज़रत दाऊद और हज़रत सुलेमान अलै० के ज़माने में बनी इसराइल की अज़ीमुश्शान सल्तनत क़ायम हुई। एक राय यह भी है कि यहाँ हज़रत युसुफ़ अलै० के इक़तदार (power) की तरफ़ इशारा है, वह अगरचे मिस्र के बादशाह तो नहीं थे लेकिन बादशाहों के भी मखदूम व ममदूह थे और बनी इसराइल को मिस्र में पीरज़ादों का सा इज़्ज़त व अहतराम हासिल हो गया था।

"और तुम्हें वह कुछ दिया जो तमाम जहान वालों में से किसी को नहीं दिया।" — وَّاٰتٰىكُمْ مَّا لَمْ يُؤْتِ اَحَدًا مِّنَ الْعٰلَمِيْنَ

आयत 21

يٰقَوْمِ ادْخُلُوا الْاَرْضَ الْمُقَدَّسَةَ الَّتِيْ كَتَبَ اللّٰهُ لَكُمْ

"(तो) ऐ मेरी क़ौम के लोगो! अब दाख़िल हो जाओ इस अर्ज़े मुक़द्दस (फ़लस्तीन) में जो अल्लाह ने तुम्हारे लिये लिख दी है"

अल्लाह का फ़ैसला है कि वह ज़मीन तुम्हें मिलेगी।

وَلَا تَرْتَدُّوْا عَلٰٓى اَدْبَارِكُمْ

"और अपनी पीठों के बल वापस ना फिरना"

فَتَنْقَلِبُوْا خٰسِرِيْنَ ﴿٢١﴾

"(और अगर ऐसा करोगे) तो नाकाम व नामुराद पलटोगे।"

आयत 22

قَالُوْا يٰمُوْسٰٓى اِنَّ فِيْهَا قَوْمًا جَبَّارِيْنَ ۖ

"उन्होंने कहा ऐ मूसा! इसमें तो बड़े ज़ोर आवर लोग हैं"

हम फ़लस्तीन में कैसे दाख़िल हो जायें? यहाँ तो जो लोग आबाद हैं वह बड़े ताक़तवर, गिराँ डेल और ज़बरदस्त हैं। हम उनका मुक़ाबला कैसे कर सकते हैं?

وَاِنَّا لَنْ نَّدْخُلَهَا حَتّٰى يَخْرُجُوْا مِنْهَا ۚ

"और हम उस (सरज़मीन) में दाख़िल नहीं होंगे जब तक वह वहाँ से निकल ना जायें।"

فَاِنْ يَّخْرُجُوْا مِنْهَا فَاِنَّا دٰخِلُوْنَ ﴿٢٢﴾

"हाँ अगर वह वहाँ से निकाल जायें तो फिर हम दाख़िल हो जाएँगे।"

आयत 23

قَالَ رَجُلٰنِ مِنَ الَّذِيْنَ يَخَافُوْنَ

"कहा दो अश्खास ने जो (अल्लाह का) खौफ़ रखने वालों में से थे"

اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمَا

"और अल्लाह ने भी उन दोनों पर ईनाम किया था"

यह दो अश्खास (शख्स) हज़रत मूसा अलै० के शागिर्द और क़रीबी हवारी थे। एक तो यूशा बिन नून थे, जो हज़रत मूसा अलै० के बाद उनके जानशीन भी हुए और गुमाने ग़ालिब है कि वह नबी भी थे, जबकि दूसरे शख्स कालिब बिन युफ़न्ना थे। इन दोनों ने अपनी क़ौम के लोगों को समझाना चाहा कि हिम्मत करो:

ادْخُلُوْا عَلَيْهِمُ الْبَابَ ۚ

"तुम उनके मुक़ाबले में दरवाज़े के अन्दर घुस जाओ।"

तुम लोग एक दफ़ा दरवाज़े में घुस कर उनका सामना तो करो।

فَاِذَا دَخَلْتُمُوْهُ فَاِنَّكُمْ غٰلِبُوْنَ ۚ

"और जब तुम उसमें दाख़िल होगे तो लाज़िमन तुम ग़ालिब हो जाओगे।"

وَعَلَى اللّٰهِ فَتَوَكَّلُوْٓا اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿٢٣﴾

"और अल्लाह पर तवक्कुल करो अगर तुम मोमिन हो।"

आयत 24

قَالُوْا يٰمُوْسٰٓى اِنَّا لَنْ نَّدْخُلَهَآ اَبَدًا

"उन्होंने कहा ऐ मूसा हम तो हरगिज़ इस शहर में दाख़िल नहीं होंगे

مَّا دَامُوْا فِيْهَا

"जब तक कि वह इसमें मौजूद हैं"

"बस तुम और तुम्हारा रब दोनों जाओ और जाकर क़िताल करो" فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَآ

गोया वह यह भी कह रहे थे कि साथ अपनी यह लठिया भी लेते जाओ, जिसने बड़े-बड़े कारनामे दिखाये हैं, इसकी मदद से उन जब्बारों को शिकस्त दे दो।

"हम तो यहाँ बैठे हैं।" اِنَّا هٰهُنَا قٰعِدُوْنَ ۝٢٤

हम तो यहाँ टिके हुए हैं, यहाँ से नहीं हिलेंगे, ज़मीन जनबद, ना जनबद गुल मुहम्मद!

यह मक़ामे इबरत है, तौरात (Book of Exsodus) से मालूम होता है कि मिस्र से हज़रत मूसा अलै० के साथ लगभग छ: लाख अफ़राद निकले थे। उनमें से औरतें, बच्चे और बूढ़े निकाल दें तो एक लाख अफ़राद तो जंग के क़ाबिल होंगे। मज़ीद मोहतात अंदाज़ा लगायें तो पचास हज़ार जंगजू तो दस्तयाब हो सकते थे, मगर उस क़ौम की पस्त हिम्मती और नज़रियाती कमज़ोरी मुलाहिज़ा हो कि छ: लाख के हुजूम में से सिर्फ़ दो अश्खास ने अल्लाह के इस हुक्म पर लब्बैक कहा। فاعتبروا يا أولى الابصار!

अब नबी की बेज़ारी मुलाहिज़ा फ़रमायें। वही हज़रत मूसा अलै० जिन्होंने अपने हम क़ौम इसराइली की मुदाफ़अत (बचाव) करते हुए एक मुक्का रसीद करके क़िब्ती की जान निकाल दी थी { فَوَكَزَهٗ مُوْسٰى فَقَضٰى عَلَيْهِ ۖ} (अल् क़सस:15) अब अपनी क़ौम से किस क़दर बेज़ारी का इज़हार कर रहे हैं।

आयत 25

"मूसा अलै० ने अर्ज़ किया परवरदिगार, मुझे तो इख़्तियार नहीं है सिवाय अपनी जान के और अपने भाई (हारुन अलै० की जान) के" قَالَ رَبِّ اِنِّيْ لَآ اَمْلِكُ اِلَّا نَفْسِيْ وَاَخِيْ

बाक़ी यह पूरी क़ौम इन्कार कर रही है। मेरा किसी पर कुछ ज़ोर नहीं है।

"तो अब तफ़रीक़ कर दे, हमारे और इन नाफ़रमान लोगों के दरमियान।" فَافْرُقْ بَيْنَنَا وَبَيْنَ الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ۝٢٥

हज़रत मूसा अलै० क़ौम के रवैय्ये से इस दर्जा आज़रदा खातिर हुए कि क़ौम से अलैहदगी की तमन्ना करने लगे कि मैं अब इन नाहंजारों के साथ नहीं रहना चाहता। इन्होंने तेरी अता करदा क्या कुछ नेअमतें बरती हैं और मेरे हाथों से क्या-क्या मौअज्ज़े यह लोग देख चुके हैं, इसके बावजूद इनका यह हाल है तो मुझे इनसे अलैहदा कर दे। अल्लाह तआला ने उनकी यह दरख्वास्त क़ुबूल नहीं की लेकिन इसका तज़किरा भी नहीं किया।

आयत 26

"फ़रमाया अब यह (अर्ज़े मुक़द्दस) हराम रहेगी इन पर चालीस साल तक।" قَالَ فَاِنَّهَا مُحَرَّمَةٌ عَلَيْهِمْ اَرْبَعِيْنَ سَنَةً ۚ

यह हमारी तरफ़ से इनकी बुज़दिली की सज़ा है। अगर यह बुज़दिली ना दिखाते तो अर्ज़े फ़लस्तीन अभी इनको अता कर दी जाती, मगर अब यह चालीस साल तक इन पर हराम रहेगी।

"यह भटकते फिरेंगे ज़मीन में।" يَتِيْهُوْنَ فِي الْاَرْضِ ۭ

इस सहराये सीना में यह चालीस साल तक मारे-मारे फिरते रहेंगे।

"तो (ऐ मूसा अलै०) आप अफ़सोस ना करें इस फ़ासिक़ क़ौम पर।" فَلَا تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ۝٢٦

अब आप इन नाफ़रमानों का ग़म ना खाइये। अब जो कुछ इन पर बीतेगी उस पर आप अलै० को तरस नहीं खाना चाहिये। आप बहरहाल इनकी तरफ़ रसूल बना कर भेजे गये हैं, जब तक ज़िन्दगी है आपको इनके साथ रहना है।

अल्लाह तआला के फ़ैसले के मुताबिक़ बनी इसराइल चालीस बरस तक सहराये सीना में भटकते फिरे। इस दौरान में वह सब लोग मर-खप गये जो जवानी की उम्र में मिस्र से निकले थे और सहरा में एक नयी नस्ल परवान चढ़ी जो खू-ए-गुलामी से मुबर्रा थी। हज़रत मूसा और हारुन अलै० दोनों का इन्तेक़ाल हो गया और इसके बाद हज़रत यूशा बिन नून के अहदे ख़िलाफ़त में बनी इसराइल इस क़ाबिल हुए कि फ़लस्तीन फ़तह कर सकें।

अब ज़रा इस पसमंज़र में सूरतुन्निसा में नाज़िल होने वाले हुक्म को भी याद करें। यहाँ तो हज़रत मूसा अ० का क़ौल नक़ल हुआ है:{ لَآ اَمْلِكُ اِلَّا نَفْسِيْ وَاَخِيْ} लेकिन वहाँ (सूरतुन्निसा, आयत:84 में) हुज़ूर ﷺ से फ़रमाया गया था: {فَقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۚ لَا تُكَلَّفُ اِلَّا نَفْسَكَ وَحَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۚ}। "(ऐ नबी ﷺ) आप अल्लाह की राह में क़िताल कीजिये, आप ﷺ अपने सिवा किसी के ज़िम्मेदार नहीं हैं, अलबत्ता अहले ईमान को भी तरगीब दें।" आप ﷺ पर किसी और की ज़िम्मेदारी नहीं है सिवाय अपनी जान के, अलबत्ता आप ﷺ अहले ईमान को जिस क़दर तरगीब (प्रोत्साहन) व तशवीक़ (प्रेरणा) दिला सकते हैं दिलायें, उनके जज़्बाते ईमानी को जिस-जिस अंदाज़ से अपील करना मुमकिन है करें, और बस इससे ज़्यादा आप ﷺ पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं।

अब पाँचवें रुकूअ में क़त्ले नाहक़, मुल्क में फ़साद फैलाने और चोरी-डाके जैसे जराइम के बारे में इस्लामी नुक़्ता-ए-नज़र और फिर उनकी सज़ाओं का ज़िक्र होगा।

आयात 27 से 34 तक

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ ابْنَيْ اٰدَمَ بِالْحَقِّ ۘ اِذْ قَرَّبَا قُرْبَانًا فَتُقُبِّلَ مِنْ اَحَدِهِمَا وَلَمْ
يُتَقَبَّلْ مِنَ الْاٰخَرِ ۭ قَالَ لَاَقْتُلَنَّكَ ۭ قَالَ اِنَّمَا يَتَقَبَّلُ اللّٰهُ مِنَ الْمُتَّقِيْنَ ۲۷ لَىِٕنْۢ
بَسَطْتَّ اِلَيَّ يَدَكَ لِتَقْتُلَنِيْ مَآ اَنَا بِبَاسِطٍ يَّدِيَ اِلَيْكَ لِاَقْتُلَكَ ۚ اِنِّىْٓ اَخَافُ اللّٰهَ
رَبَّ الْعٰلَمِيْنَ ۲۸ اِنِّىْٓ اُرِيْدُ اَنْ تَبُوْۗاَ بِاِثْمِيْ وَاِثْمِكَ فَتَكُوْنَ مِنْ اَصْحٰبِ النَّارِ ۚ
وَذٰلِكَ جَزٰۗؤُا الظّٰلِمِيْنَ ۲۹ فَطَوَّعَتْ لَهٗ نَفْسُهٗ قَتْلَ اَخِيْهِ فَقَتَلَهٗ فَاَصْبَحَ مِنَ
الْخٰسِرِيْنَ ۳۰ فَبَعَثَ اللّٰهُ غُرَابًا يَّبْحَثُ فِي الْاَرْضِ لِيُرِيَهٗ كَيْفَ يُوَارِيْ سَوْءَةَ
اَخِيْهِ ۭ قَالَ يٰوَيْلَتٰى اَعَجَزْتُ اَنْ اَكُوْنَ مِثْلَ هٰذَا الْغُرَابِ فَاُوَارِيَ سَوْءَةَ اَخِيْ ۚ
فَاَصْبَحَ مِنَ النّٰدِمِيْنَ ۳۱ ۚ مِنْ اَجْلِ ذٰلِكَ ۚ كَتَبْنَا عَلٰي بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ اَنَّهٗ مَنْ
قَتَلَ نَفْسًۢا بِغَيْرِ نَفْسٍ اَوْ فَسَادٍ فِي الْاَرْضِ فَكَاَنَّمَا قَتَلَ النَّاسَ جَمِيْعًا ۭ وَمَنْ
اَحْيَاهَا فَكَاَنَّمَآ اَحْيَا النَّاسَ جَمِيْعًا ۭ وَلَقَدْ جَاۗءَتْهُمْ رُسُلُنَا بِالْبَيِّنٰتِ ۡ ثُمَّ اِنَّ
كَثِيْرًا مِّنْهُمْ بَعْدَ ذٰلِكَ فِي الْاَرْضِ لَمُسْرِفُوْنَ ۳۲ اِنَّمَا جَزٰۗؤُا الَّذِيْنَ يُحَارِبُوْنَ اللّٰهَ
وَرَسُوْلَهٗ وَيَسْعَوْنَ فِي الْاَرْضِ فَسَادًا اَنْ يُّقَتَّلُوْٓا اَوْ يُصَلَّبُوْٓا اَوْ تُقَطَّعَ اَيْدِيْهِمْ
وَاَرْجُلُهُمْ مِّنْ خِلَافٍ اَوْ يُنْفَوْا مِنَ الْاَرْضِ ۭ ذٰلِكَ لَهُمْ خِزْيٌ فِي الدُّنْيَا وَلَهُمْ فِي
الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۳۳ ۙ اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْ قَبْلِ اَنْ تَقْدِرُوْا عَلَيْهِمْ ۚ فَاعْلَمُوْٓا
اَنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۳۴ ۚ

आयत 27

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ ابْنَيْ اٰدَمَ بِالْحَقِّ ۘ

"और (ऐ नबी ﷺ) इनको पढ़ कर सुनाइये आदम अलै० के दो बेटों का क़िस्सा हक़ के साथ।"

"जबकि उन दोनों ने क़ुर्बानी पेश की" اِذۡ قَرَّبَا قُرۡبَانًا

"तो उनमें से एक की क़ुर्बानी क़ुबूल कर ली गयी, जबकि दूसरे की क़ुबूल नहीं की गयी।" فَتُقُبِّلَ مِنۡ اَحَدِهِمَا وَلَمۡ يُتَقَبَّلۡ مِنَ الۡاٰخَرِ ؕ

आदम अलै० के यह दो बेटे हाबील और क़ाबील थे। हाबील भेड़-बकरियाँ चराता था और क़ाबील काश्तकार था। उन दोनों ने अल्लाह के हुज़ूर क़ुर्बानी दी। हाबील ने कुछ जानवर पेश किये, जबकि क़ाबील ने अनाज नज़र किया। हाबील की क़ुर्बानी क़ुबूल हो गयी मगर क़ाबील की क़ुबूल नहीं हुई। उस ज़माने में क़ुर्बानी की क़ुबूलियत की अलामत यह होती थी कि आसमान से एक शोला नीचे उतरता था और वह क़ुर्बानी की चीज़ को जला कर भस्म कर देता था। इसका मतलब यह था कि अल्लाह ने क़ुर्बानी को क़ुबूल फ़रमा लिया।

"उसने कहा मैं तुम्हें क़त्ल करके रहूँगा।" قَالَ لَاَقۡتُلَنَّكَ ؕ

क़ाबील ने, जिसकी क़ुर्बानी क़ुबूल नहीं हुई थी, हसद की आग में जल कर अपने भाई हाबील से कहा कि मैं तुम्हें ज़िन्दा नहीं छोड़ूँगा।

"उसने जवाब दिया कि अल्लाह तो परहेज़गारों ही से क़ुबूल करता है।" قَالَ اِنَّمَا يَتَقَبَّلُ اللّٰهُ مِنَ الۡمُتَّقِيۡنَ ﴿۲۷﴾

हाबील ने कहा भाई जान, इसमें मेरा क्या क़ुसूर है? यह तो अल्लाह तआला का क़ायदा है कि वह सिर्फ़ अपने मुत्तक़ी बन्दों की क़ुर्बानी क़ुबूल करता है।

आयत 28

"अगर आप अपना हाथ चलाएँगे मुझ पर मुझे क़त्ल करने के लिये" لَئِنۡۢ بَسَطۡتَّ اِلَىَّ يَدَكَ لِتَقۡتُلَنِىۡ

"(तब भी) मैं अपना हाथ नहीं चलाऊँगा आपको क़त्ल करने के लिये।" مَاۤ اَنَا بِبَاسِطٍ يَّدِىَ اِلَيۡكَ لِاَقۡتُلَكَ ۚ

यानि अगर ऐसा हुआ तो यह एक तरफ़ा क़त्ल ही होगा।

"मुझे तो अल्लाह का खौफ़ है जो तमाम जहानों का परवरदिगार है।" اِنِّىۡۤ اَخَافُ اللّٰهَ رَبَّ الۡعٰلَمِيۡنَ ﴿۲۸﴾

आयत 29

"मैं चाहता हूँ कि मेरा और अपना गुनाह तुम्ही अपने सर लो" اِنِّىۡۤ اُرِيۡدُ اَنۡ تَبُوۡٓاَ بِاِثۡمِىۡ وَاِثۡمِكَ

"तो फिर तुम हो जाओगे जहन्नम वालों में से।" فَتَكُوۡنَ مِنۡ اَصۡحٰبِ النَّارِ ۚ

अगर आप इस इन्तहा तक पहुँच जाएँगे कि मुझे क़त्ल कर ही देंगे तो आप अपने गुनाहों के साथ-साथ मेरी खताओं का बोझ भी अपने सर उठा लेंगे। एक बेगुनाह इन्सान को क़त्ल करने वाला गोया मक़तूल के तमाम गुनाहों का बोझ भी अपने सर उठा लेता है। यानि अगर आप मुझे नाहक़ क़त्ल करेंगे तो मेरे गुनाहों का वबाल भी आपके सर होगा और मेरे लिये तो यह कोई घाटे का सौदा नहीं है। अलबत्ता इस जुर्म की वजह से आप जहन्नमी हो जाएँगे।

"और यही बदला है ज़ालिमों का।" وَذٰلِكَ جَزٰٓؤُا الظّٰلِمِيۡنَ ۚ ﴿۲۹﴾

आयत 30

"बिलआखिर उसके नफ्स ने आमादा कर ही लिया उसे अपने भाई के क़त्ल पर" فَطَوَّعَتْ لَهٗ نَفْسُهٗ قَتْلَ اَخِيْهِ

इन अल्फ़ाज़ के बैनल सुतूर (between the lines) उसके ज़मीर की कशमकश का मुकम्मल नक़्शा मौजूद है। एक तरफ अल्लाह का खौफ़, नेकी का जज़्बा, खून का रिश्ता और दूसरी तरफ़ शैतानी तरगीब, हसद की आग और नफ्सानी ख्वाहिश की उकसाहट। और फिर बिलआखिर इस अन्दरूनी कशमकश में उसका नफ्स जीत ही गया।

"तो उसने उसे क़त्ल कर दिया और हो गया तबाह होने वालों में से।" فَقَتَلَهٗ فَاَصْبَحَ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ۝٣٠

.

आयत 31

"तो अल्लाह ने एक कव्वा भेजा जो ज़मीन कुरेदने लगा" فَبَعَثَ اللّٰهُ غُرَابًا يَّبْحَثُ فِي الْاَرْضِ

यह पहला खून था जो नस्ले आदम में हुआ। क़ाबील ने हाबील को क़त्ल तो कर दिया लेकिन अब उसे कुछ समझ नहीं आ रहा था कि भाई की लाश का क्या करे, उसे कैसे dispose off करे, तो अल्लाह तआला ने एक कव्वे को भेज दिया जो उसके सामने अपनी चोंच से ज़मीन खोदने लगा।

"ताकि (अल्लाह) उसे दिखा दे कि अपने भाई की लाश को कैसे छुपाये।" لِيُرِيَهٗ كَيْفَ يُوَارِيْ سَوْءَةَ اَخِيْهِ

कव्वे के ज़मीन खोदने के अमल से उसे समझ आ जाये कि ज़मीन खोद कर लाश को दफ़न किया जा सकता है।

"(यह देखा तो) उसने कहा हाय मेरी शामत! मैं इस कव्वे जैसा भी ना हो सका कि अपने भाई की लाश को छुपा देता।" قَالَ يٰوَيْلَتٰى اَعَجَزْتُ اَنْ اَكُوْنَ مِثْلَ هٰذَا الْغُرَابِ فَاُوَارِيَ سَوْءَةَ اَخِيْ ۚ

अफ़सोस मुझ पर! क्या मेरे अन्दर इस कव्वे जैसी अक़्ल भी ना थी कि यह तरीक़ा मुझे खुद ही सूझ जाता।

"फिर वह बहुत पशेमान हुआ।" فَاَصْبَحَ مِنَ النّٰدِمِيْنَ ۝ۚ

इस अहसास पर उसके अन्दर बड़ी शदीद नदामत पैदा हुई।

आयत 32

"इस वजह से हमने बनी इसराइल पर (तौरात में) यह बात लिख दी थी" مِنْ اَجْلِ ذٰلِكَ ۚ كَتَبْنَا عَلٰى بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ

{مِنْ اَجْلِ ذٰلِكَ } वाला फ़िक़रा पिछली आयत के साथ भी पढ़ा जा सकता है और इस आयत के साथ भी, यह दोनों तरफ़ बामायने बन सकता है।

"कि जिस किसी ने किसी इन्सान को क़त्ल किया बगैर किसी क़त्ल के क़िसास के" اَنَّهٗ مَنْ قَتَلَ نَفْسًۢا بِغَيْرِ نَفْسٍ

यानि अगर किसी ने क़त्ल किया है और वह उसके क़िसास में क़त्ल किया जाये तो यह क़त्ल नाहक़ नहीं है।

"या बगैर ज़मीन में फ़साद फ़ैलाने (के जुर्म की सज़ा) के" اَوْ فَسَادٍ فِي الْاَرْضِ

अगर कोई शख्स मुल्क में फ़साद फ़ैलाने का मुजरिम है और उसे इस जुर्म की सज़ा के तौर पर क़त्ल कर दिया जाये तो उसका क़त्ल भी क़त्ले नाहक़

नहीं। लेकिन इन सूरतों के अलावा अगर किसी ने किसी बेक़सूर इन्सान को क़त्ल कर दिया।

فَكَاَنَّمَا قَتَلَ النَّاسَ جَمِيْعًا

"गोया उसने तमाम इंसानों को क़त्ल कर दिया।"

उसका यह फ़अल ऐसा ही है जैसे उसने पूरी नौए इंसानी को तहे तेग कर दिया। इसलिये कि उसने क़त्ले नाहक़ से तमद्दुन व मआशरत की जड़ काट डाली। जान व माल का अहतराम ही तो तमद्दुन की जड़ और बुनियाद है।

وَمَنْ اَحْيَاهَا فَكَاَنَّمَآ اَحْيَا النَّاسَ جَمِيْعًا

"और जिसने उस (किसी एक इन्सान) की जान बचायी तो गोया उसने पूरी नौए इंसानी को ज़िन्दा कर दिया।"

وَلَقَدْ جَآءَتْهُمْ رُسُلُنَا بِالْبَيِّنٰتِ

"और उनके पास हमारे रसूल आये थे वाज़ेह निशानियाँ लेकर"

ثُمَّ اِنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ بَعْدَ ذٰلِكَ فِي الْاَرْضِ لَمُسْرِفُوْنَ ۝٣٢

"लेकिन इसके बावजूद उनमें से बहुत से लोग ज़मीन में ज़्यादतियाँ करते फिर रहे हैं।"

अब "आयते मुहारबा" आ रही है जो इस्लामी क़वानीन के लिहाज़ से बहुत अहम आयत है। मुहारबा यह है कि इस्लामी रियासत में कोई गिरोह फ़ितना व फ़साद मचा रहा है, दहशतगर्दी कर रहा है, ख़ूंरेज़ी और क़त्लो गारत कर रहा है, राहज़नी और डाकाज़नी कर रहा है, गैंग रेप हो रहे हैं। इस आयत में ऐसे लोगों की सज़ा बयान हुई है। लेकिन वाज़ेह रहे कि यह इस्लामी रियासत की बात हो रही है, जहाँ इस्लामी क़ानून नाफ़िज़ हो, जहाँ इस्लाम का पूरा निज़ाम क़ायम हो। वरना अगर निज़ाम ऐसा हो कि झूठी गवाहियाँ देने वाले खुले आम सौदे कर रहे हों, ईमान फ़रोश मौजूद हों, जजों को ख़रीदा जा सकता हो और ऐसे निज़ाम के तहत शरई क़वानीन का निफ़ाज़ कर दिया जाये तो फिर इससे जो नतीजे निकलेंगे उनसे शरीअत उल्टा बदनाम होगी। लिहाज़ा रियासत में हुकूमती निज़ाम और मरवज्जा (प्रचलित) क़वानीन दोनों का दुरुस्त होना लाज़मी है। अगर ऐसा होगा तो यह दोनों एक-दूसरे को मज़बूत व मुस्तहकम करेंगे और इसी सूरत में मतलूबा नताइज की तवक्क़ो की जा सकती है।

आयत 33

اِنَّمَا جَزٰٓؤُا الَّذِيْنَ يُحَارِبُوْنَ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ

"यही है सज़ा उन लोगों की जो लड़ाई करते हैं अल्लाह और उसके रसूल से"

यानि इस्लामी रियासत की अमलदारी को चैलेंज करते हैं।

وَيَسْعَوْنَ فِي الْاَرْضِ فَسَادًا

"और ज़मीन में फ़साद फैलाते फिरते हैं"

اَنْ يُّقَتَّلُوْٓا

"कि उन्हें (इबरतनाक तौर पर) क़त्ल किया जाये"

वाज़ेह रहे कि यहाँ फ़अल یُقْتَلُوْا इस्तेमाल नहीं हुआ बल्कि یُقَتَّلُوْا है कि उनके टुकड़े किये जायें।

اَوْ يُصَلَّبُوْٓا

"या उन्हें सूली चढ़ाया जाये"

اَوْ تُقَطَّعَ اَيْدِيْهِمْ وَاَرْجُلُهُمْ مِّنْ خِلَافٍ

"या उनके हाथ और पाँव मुखालिफ़ सिस्तों में काट दिये जायें"

यानि एक तरफ़ का हाथ और दूसरी तरफ़ का एक पाँव काटा जाये।

اَوْ يُنْفَوْا مِنَ الْاَرْضِ ۭ

"या उन्हें मुल्क बदर कर दिया जाये।"

ذٰلِكَ لَهُمْ خِزْيٌ فِي الدُّنْيَا

"यह तो उनके लिये दुनिया की ज़िन्दगी में रुसवाई है"

وَلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝٣٣

"और आख़िरत में उनके लिये (मज़ीद) बहुत बड़ा अज़ाब है।"

आयत 34

اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْ قَبْلِ اَنْ تَقْدِرُوْا عَلَيْهِمْ ۚ

"सिवाय उनके जो तौबा कर लें इससे पहले कि तुम उन पर क़ाबू पाओ।"

यानि पकड़े जाने से पहले ऐसे लोग अगर तौबा कर लें तो उनके लिये रिआयत की गुंजाइश है, लेकिन जब पकड़ लिये गये तो तौबा का दरवाज़ा बंद हो गया।

فَاعْلَمُوْۤا اَنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٣٤

"पस जान लो कि अल्लाह तआला मगफ़िरत फ़रमाने वाला, मेहरबान है।"

हज़रत अली रज़ि० ने ख्वारिज के साथ यही मामला किया था कि अगर तुम अपने ग़लत अक़ीदे को अपने तक रखो तो तुम्हें कुछ नहीं कहा जायेगा, लेकिन अगर तुम खूंरेज़ी करोगे, क़त्लो गारत करोगे तो फिर तुम्हारे साथ रिआयत नहीं की जा सकती।

आयात 35 से 43 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَابْتَغُوْۤا اِلَيْهِ الْوَسِيْلَةَ وَجَاهِدُوْا فِيْ سَبِيْلِهٖ لَعَلَّكُمْ
تُفْلِحُوْنَ ۝٣٥ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْ اَنَّ لَهُمْ مَّا فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا وَّمِثْلَهٗ مَعَهٗ
لِيَفْتَدُوْا بِهٖ مِنْ عَذَابِ يَوْمِ الْقِيٰمَةِ مَا تُقُبِّلَ مِنْهُمْ ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝٣٦
يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّخْرُجُوْا مِنَ النَّارِ وَمَا هُمْ بِخٰرِجِيْنَ مِنْهَا ۫ وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّقِيْمٌ ۝٣٧
وَالسَّارِقُ وَالسَّارِقَةُ فَاقْطَعُوْۤا اَيْدِيَهُمَا جَزَآءًۢ بِمَا كَسَبَا نَكَالًا مِّنَ اللّٰهِ ۗ وَاللّٰهُ
عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝٣٨ فَمَنْ تَابَ مِنْۢ بَعْدِ ظُلْمِهٖ وَاَصْلَحَ فَاِنَّ اللّٰهَ يَتُوْبُ عَلَيْهِ ۗ اِنَّ اللّٰهَ
غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٣٩ اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ لَهٗ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۗ يُعَذِّبُ مَنْ
يَّشَآءُ وَيَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ ۗ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝٤٠ يٰۤاَيُّهَا الرَّسُوْلُ لَا يَحْزُنْكَ
الَّذِيْنَ يُسَارِعُوْنَ فِي الْكُفْرِ مِنَ الَّذِيْنَ قَالُوْۤا اٰمَنَّا بِاَفْوَاهِهِمْ وَلَمْ تُؤْمِنْ قُلُوْبُهُمْ
ۛ وَمِنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا ۛ سَمّٰعُوْنَ لِلْكَذِبِ سَمّٰعُوْنَ لِقَوْمٍ اٰخَرِيْنَ ۙ لَمْ يَاْتُوْكَ ۗ يُحَرِّفُوْنَ
الْكَلِمَ مِنْۢ بَعْدِ مَوَاضِعِهٖ ۚ يَقُوْلُوْنَ اِنْ اُوْتِيْتُمْ هٰذَا فَخُذُوْهُ وَاِنْ لَّمْ تُؤْتَوْهُ
فَاحْذَرُوْا ۗ وَمَنْ يُّرِدِ اللّٰهُ فِتْنَتَهٗ فَلَنْ تَمْلِكَ لَهٗ مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا ۗ اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ لَمْ
يُرِدِ اللّٰهُ اَنْ يُّطَهِّرَ قُلُوْبَهُمْ ۗ لَهُمْ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ ۚ وَّلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ
۝٤١ سَمّٰعُوْنَ لِلْكَذِبِ اَكّٰلُوْنَ لِلسُّحْتِ ۗ فَاِنْ جَآءُوْكَ فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ اَوْ اَعْرِضْ
عَنْهُمْ ۚ وَاِنْ تُعْرِضْ عَنْهُمْ فَلَنْ يَّضُرُّوْكَ شَيْـًٔا ۗ وَاِنْ حَكَمْتَ فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ
بِالْقِسْطِ ۗ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِيْنَ ۝٤٢ وَكَيْفَ يُحَكِّمُوْنَكَ وَعِنْدَهُمُ التَّوْرٰىةُ
فِيْهَا حُكْمُ اللّٰهِ ثُمَّ يَتَوَلَّوْنَ مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ ۗ وَمَاۤ اُولٰٓئِكَ بِالْمُؤْمِنِيْنَ ۝٤٣

आयत 35

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَابْتَغُوْۤا اِلَيْهِ الْوَسِيْلَةَ

“ऐ अहले ईमान, अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो और उसकी जनाब में उसका क़ुर्ब तलाश करो”

यहाँ लफ्ज़ “वसीला” क़बीले गौर है और इस लफ्ज़ ने काफ़ी लोगों को परेशान भी किया है। लफ्ज़ “वसीला” उर्दू में तो “ज़रिया” के मायने में आता है, यानि किसी तक पहुँचे का कोई ज़रिया बना लेना, सिफ़ारिश के लिये किसी को वसीला बना लेना। लेकिन अरबी ज़बान में “वसीले” के मायने हैं “क़ुर्ब”। बाज़ अल्फ़ाज़ ऐसे हैं जिनका अरबी में मफ़हूम कुछ और है जबकि उर्दू में कुछ और है। जैसे लफ्ज़ “ज़लील” है, अरबी में इसके मायने “कमज़ोर” जबकि उर्दू में “कमीने” के हैं। जैसा की हम पढ़ आये हैं: { وَلَقَدْ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ بِبَدْرٍ وَّاَنْتُمْ اَذِلَّةٌ } (आले इमरान:123) यानि “ऐ मुसलमानों! याद करो अल्लाह ने तुम्हारी मदद की थी बद्र में जबकि तुम बहुत कमज़ोर थे।” अब अगर यहाँ ज़लील का तर्जुमा उर्दू वाला कर दिया जाये तो हमारे ईमान के लाले पड़ जाएँगे। इसी तरह अरबी में “जहल” के मायने जज़्बाती होना है, अनपढ़ होना नहीं। एक पढ़ा लिखा शख़्स भी जाहिल यानि जज़्बाती, अक्खड़ मिज़ाज हो सकता है लेकिन उर्दू में जाहिल आलिम का मुतज़ाद (विपरीत) है, यानि जो अनपढ़ हो। इसी तरह का मामला लफ्ज़ “वसीले” का है। इसका असल मफ़हूम “क़ुर्ब” है और यहाँ भी यही मुराद लिया जायेगा। यहाँ इरशाद हुआ है:

“ऐ ईमान वालो, अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो और (आगे बढ़ कर) उसका क़ुर्ब तलाश करो”

तक़वा के मायने हैं अल्लाह के ग़ज़ब से, अल्लाह की नाराज़गी से और अल्लाह के अहकाम तोड़ने से बचना। यह एक मनफ़ी मुहर्रिक (इशारा) है, जबकि क़ुर्बे इलाही की तलब एक मुस्बत मुहर्रिक है कि अल्लाह के नज़दीक से नज़दीकतर होते चलो जाओ। लेकिन उसके क़ुर्ब का ज़रिया क्या होगा?

وَجَاهِدُوْا فِيْ سَبِيْلِهٖ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۳۵

“और उसकी राह में जिहाद करो ताकि तुम फ़लाह पाओ।”

इससे बात बिल्कुल वाज़ेह हो गयी कि तक़र्रुब इलल्लाह के लिये जिहाद करो। तक़वा शर्ते लाज़िम है। यानि पहले जो हराम चीज़ें हैं उनसे अपने आप को बचाओ, जिन चीज़ों से रोक दिया गया है उनसे रुक जाओ और अल्लाह की नाफ़रमानी से बाज़ आ जाओ। और फिर उसका तक़र्रुब हासिल करना चाहते हो तो उसकी राह में जद्दो-जहद करो।

आयत 36

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْ اَنَّ لَهُمْ مَّا فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا وَّمِثْلَهٗ مَعَهٗ

“यक़ीनन वह लोग जिन्होंने कुफ़्र किया, अगर उनके पास वह सारी दौलत हो जो कि ज़मीन में है कुल की कुल और उसके साथ उतनी ही और भी हो”

لِيَفْتَدُوْا بِهٖ مِنْ عَذَابِ يَوْمِ الْقِيٰمَةِ

“(और वह चाहें) कि वह उसके ज़रिये से फ़िदया देकर छूट सकें क़यामत के दिन के अज़ाब से”

مَا تُقُبِّلَ مِنْهُمْ

“तो उनसे हरगिज़ क़ुबूल नहीं की जायेगी।”

यह हुक्म गोया “तालीक़ बिलमहाल” है कि ना ऐसा मुमकिन है और ना ऐसा होगा। लेकिन बात की सख्ती वाज़ेह करने के लिये यह अंदाज़ा अपनाया गया है और आखरी दर्जे में वज़ाहत कर दी गयी है कि अगर बिलफ़र्ज़ उनके पास इतनी दौलत मौजूद भी हो तब भी अल्लाह के यहाँ उनका फिदया क़ुबूल नहीं होगा।

"और उनके लिये दर्दनाक अज़ाब है।" وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝٣٦

आयत 37

"वह चाहेंगे कि आग से किसी तरह निकल जायें लेकिन निकल नहीं पाएँगे" يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّخْرُجُوْا مِنَ النَّارِ وَمَا هُمْ بِخٰرِجِيْنَ مِنْهَا

"और उनके लिये होगा क़ायम रहने वाला अज़ाब।" وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّقِيْمٌ ۝٣٧

यानि उनको मुसलसल दाइम और क़ायम रहने वाला अज़ाब दिया जायेगा।

आयत 38

"और चोर ख्वाह मर्द हो या औरत, उन दोनों के हाथ काट दो" وَالسَّارِقُ وَالسَّارِقَةُ فَاقْطَعُوْٓا اَيْدِيَهُمَا

यानि चोर का एक हाथ काट दो।

"यह बदला है उनके करतूत का" جَزَآءًۢ بِمَا كَسَبَا

"और इबरतनाक सज़ा है अल्लाह की तरफ़ से।" نَكَالًا مِّنَ اللّٰهِ

देखिये क़ुरान ख़ुद अपनी हिफ़ाज़त किस तरह करता है और क्यों चैलेंज करता है कि इस कलाम पर बातिल हमलावर नहीं हो सकता किसी भी जानिब से (हा मीम सज्दा:42)। ज़रा मुलाहिज़ा कीजिये इस आयत के ज़िमन में गुलाम अहमद परवेज़ साहब कहते हैं कि यहाँ चोर का हाथ काटने का मतलब है कि ऐसा निज़ाम वज़अ किया जाये जिसमें किसी को चोरी की ज़रूरत ही ना पड़े। यह तो हम भी चाहते हैं कि ऐसा निज़ाम हो, रियासत की तरफ़ से किफ़ालते आम्मा की सहूलत मौजूद हो ताकि कोई शख्स मजबूरन चोरी ना करे, लेकिन "فَاقْطَعُوْٓا اَيْدِيَهُمَا" के अल्फ़ाज़ से जो मतलब परवेज़ साहब ने निकाला है वह बिल्कुल ग़लत है। और अगर फ़र्ज़ कर लें कि ऐसा ही है तो फिर {جَزَآءًۢ بِمَا كَسَبَا} (यह बदला है उनकी अपनी कमाई का) की क्या तावील होगी? यानि जो कमाई उन्होंने की है उसका बदला यह है कि एक अच्छा निज़ाम क़ायम कर दिया जाये? इसके बाद फिर { نَكَالًا مِّنَ اللّٰهِ } के अल्फ़ाज़ मज़ीद आये हैं। "نكال" कहते हैं इबरतनाक सज़ा को। तो क्या ऐसे निज़ाम का क़ायम करना अल्लाह की तरफ़ से इबरतनाक सज़ा होगी? अपने देखा क़ुरान के मायने व मफ़हूम की हिफ़ाज़त के लिये भी अल्फ़ाज़ के कैसे-कैसे पहरे बिठाये गये हैं!

दरअसल हुदूद व ताज़ीरात के फ़लसफ़े को समझना बहुत ज़रूरी है और इसके लिये लफ्ज़ "نكال" बहुत अहम है। क़ुरान में ताज़ीरात और हुदूद के सिलसिले में यह अल्फ़ाज़ अक्सर इस्तेमाल हुआ है। यानि अगर सज़ा होगी तो इबरतनाक होगी। इस्लाम में शहादत का क़ानून बहुत सख्त रखा गया है। ज़रा सा शुबह हो तो उसका फ़ायदा मुल्ज़िम को दिया जाता है। इस लिहाज़ से सज़ा का निफ़ाज़ आसान नहीं। लेकिन अगर तमाम मराहिल तय करके जुर्म पूरी तरह साबित हो जाये तो फिर सज़ा ऐसी दी जाये कि एक को सज़ा मिले और लाखों की आँखें खुल जायें ताकि आइन्दा किसी को जुर्म करने की हिम्मत ना हो। यह फ़लसफ़ा है इस्लामी सज़ाओं का। यह दरहक़ीक़त एक तस्दीद (deterrence) है जिसके सबब मआशरे से बुराई का इस्तेसाल (विनाश) करना मुमकिन है। आज अमेरिका जैसे (नाम-निहाद) मज़हब मआशरे में भी आये दिन इन्तहाई घिनौने जराइम हो रहे हैं। इसकी वजह यह है कि अहतसाब और सज़ा का निज़ाम दुरुस्त नहीं। लोग जुर्म करते हैं, सज़ा होती है, जेल जाते हैं, कुछ दिन वहाँ गुज़ारने के बाद, वापस आते हैं, फिर जुर्म करते हैं, फिर जेल चले जाते हैं। जेल क्या है? सरकारी मेहमानदारी है। यही वजह है कि ऐसे मआशरों में जराइम रोज़-ब-रोज़ बढ़ते जा रहे हैं।

"और अल्लाह ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।" وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝٣٨

आयत 39

"तो जिसने भी तौबा कर ली अपने इस ज़ुल्म के बाद और इस्लाह कर ली तो अल्लाह ज़रूर क़ुबूल करता है उसकी तौबा को।" فَمَنْ تَابَ مِنْۢ بَعْدِ ظُلْمِهٖ وَاَصْلَحَ فَاِنَّ اللّٰهَ يَتُوْبُ عَلَيْهِ ؕ

"यक़ीनन अल्लाह गफ़ूर है, रहीम है।" اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٣٩

लेकिन इस तौबा से जुर्म की सज़ा दुनिया में ख़त्म नहीं होगी। यह जुर्म है दुनिया (क़ानून) का और गुनाह है अल्लाह का। जुर्म की सज़ा दुनिया में मिलेगी, गुनाह की सज़ा अल्लाह ने देनी है, अगर तौबा कर ली तो अल्लाह तआला माफ़ फ़रमा देगा और अगर तौबा नहीं की तो उसकी सज़ा भी मिलेगी।

आयत 40

"क्या तुम नहीं जानते हो कि अल्लाह ही के लिये है आसमानों और ज़मीन की बादशाही?" اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ لَهٗ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ

"वह सज़ा देगा जिसको चाहेगा और बख्श देगा जिसको चाहेगा।" يُعَذِّبُ مَنْ يَّشَآءُ وَيَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ ؕ

"और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।" وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝٤٠

अब यहाँ फिर ज़िक्र आ रहा है उन लोगों का जो दोगली पालिसी पर कारबंद थे, लेकिन सूरतुल बक़रह की तरह यहाँ भी रुए सुखन क़तईयत (accuracy) के साथ वाज़ेह नहीं किया गया। लिहाज़ा इसका इन्तबाक़ (अनुपालन) मुनाफ़िक़ीन पर भी होगा और अहले किताब पर भी। मुनाफ़िक़ अहले किताब में से भी थे, जिनका मीलान इस्लाम की तरफ़ भी था और चाहते भी थे कि मुसलमानों में शामिल रहें लेकिन वह अपने साथियों को भी छोड़ने पर तैयार नहीं थे। तो यह लोग जो "مُذَبْذَبِيْنَ بَيْنَ ذٰلِكَ" की मिसाल थे, यह दोनों तरफ़ के लोग थे।

आयत 41

"ऐ नबी (ﷺ) यह लोग आपके लिये बाइसे रन्ज ना हों जो कुफ़्र की राह में बहुत भाग-दौड़ कर रहे हैं" يٰۤاَيُّهَا الرَّسُوْلُ لَا يَحْزُنْكَ الَّذِيْنَ يُسَارِعُوْنَ فِى الْكُفْرِ

"इन लोगों में से जो अपने मुँह से तो कहते हैं कि हम ईमान रखते हैं, मगर उनके दिल ईमान नहीं लाये हैं।" مِنَ الَّذِيْنَ قَالُوْۤا اٰمَنَّا بِاَفْوَاهِهِمْ وَلَمْ تُؤْمِنْ قُلُوْبُهُمْ ۛ

आप ﷺ इन लोगों की सरगरमियों और भाग-दौड़ से ग़मगीन और रंजीदा खातिर ना हों।

"और इसी तरह के लोग यहूदियों में से भी हैं।" وَمِنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا ۛ

"यह बड़े ही गौर से सुनते हैं झूठ को" سَمّٰعُوْنَ لِلْكَذِبِ

"और यह सुनते हैं कुछ और लोगों की खातिर जो आपके पास नहीं आते" سَمّٰعُوْنَ لِقَوْمٍ اٰخَرِيْنَ ۙ لَمْ يَاْتُوْكَ ؕ

यानि एक तो यह लोग अपने "शयातीन" की झूठी बातें बड़ी तवज्जो से सुनते हैं, जैसे: {وَاِذَا لَقُوا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا قَالُوْٓا اٰمَنَّا ۚ وَاِذَا خَلَوْا اِلٰى شَيٰطِيْنِهِمْ ۙ قَالُوْٓا اِنَّا مَعَكُمْ ۙ اِنَّمَا نَحْنُ مُسْتَهْزِءُوْنَ} सूरतुल बक़रह आयत:14 में फ़रमाया। फिर यह लोग उनकी तरफ़ से जासूस बन कर मुसलमानों के यहाँ आते हैं कि यहाँ से सुन कर उनको रिपोर्ट दे सकें कि आज मुहम्मद (ﷺ) ने यह कहा, आज आप ﷺ की मजलिस में फलाँ मामला हुआ। {سَمّٰعُوْنَ لِقَوْمٍ اٰخَرِيْنَ ۙ} का तर्जुमा दोनों तरह से हो सकता है: "दूसरी क़ौम के लोगों की बातों को बड़ी तवज्जो से सुनते हैं" या "सुनते हैं दूसरी क़ौम के लोगों के लिये" यानि उन्हें रिपोर्ट करने के लिये उनके जासूस की हैसियत से। उनके जो लीडर और शयातीन हैं, वह आप ﷺ के पास ख़ुद नहीं आते और यह जो बैन-बैन के लोग हैं यह आप ﷺ के पास आते हैं और उनके ज़रिये से जासूसी का यह सारा मामला चल रहा है।

يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ مِنْۢ بَعْدِ مَوَاضِعِهٖ ۚ	*"वह कलाम को फेर देते हैं उसकी जगह से उसका मौक़ा व महल (जगह) मुअय्यन हो जाने के बाद।"*
يَقُوْلُوْنَ اِنْ اُوْتِيْتُمْ هٰذَا فَخُذُوْهُ	*"वह कहते हैं अगर तुम्हें यही (फ़ैसला) मिल जाये तो क़ुबूल कर लेना"*
وَاِنْ لَّمْ تُؤْتَوْهُ فَاحْذَرُوْا ۚ	*"और अगर यह (फ़ैसला) ना मिले तो कन्नी कतरा जाना।"*

अहले किताब के सरदारों को अगर किसी मुक़दमे का फ़ैसला मतलूब होता तो अपने लोगों को रसूल अल्लाह ﷺ के पास भेजते और पहले से उन्हें बता देते कि अगर फ़ैसला इस तरह हो तो तुम क़ुबूल कर लेना, वरना रद्द कर देना। वाज़ेह रहे कि मदीना मुनव्वरा में इस्लामी रियासत और पूरे तौर पर एक हमागीर इस्लामी हुकूमत दरअसल फ़तह मक्का के बाद क़ायम हुई और यह सूरते हाल इससे पहले की थी। वरना किसी रियासत में दोहरा अदालती निज़ाम नहीं हो सकता। यही वजह थी कि यह लोग जब चाहते अपने फ़ैसलों के लिये हुज़ूर ﷺ के पास आ जाते और जब चाहते किसी और के पास चले जाते थे। गोया बयक वक़्त दो मुतवाज़ी निज़ाम चल रहे थे। इसी लिये तो वह लोग यह कहने कि जसारत (हिम्मत) करते थे कि यह फ़ैसला हो तो क़ुबूल कर लेना, वरना नहीं।

وَمَنْ يُّرِدِ اللّٰهُ فِتْنَتَهٗ فَلَنْ تَمْلِكَ لَهٗ مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا ۭ	*"और जिसको अल्लाह ही ने फ़ितने में डालने का इरादा कर लिया हो तो तुम उसके लिये अल्लाह के मुक़ाबले में कुछ भी इख़्तियार नहीं रखते।"*
اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ لَمْ يُرِدِ اللّٰهُ اَنْ يُّطَهِّرَ قُلُوْبَهُمْ ۭ	*"यह वह लोग हैं कि जिनके दिलों को अल्लाह ने पाक करना चाहा ही नहीं।"*
لَهُمْ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ ۖ	*"उनके लिये दुनिया में भी रुसवाई है"*
وَّلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝	*"और आख़िरत में भी उनके लिये बहुत बड़ा अज़ाब है।"*

आयत 42

سَمّٰعُوْنَ لِلْكَذِبِ	*"यह ख़ूब सुनने वाले हैं झूठ को"*
اَكّٰلُوْنَ لِلسُّحْتِ ۭ	*"ख़ूब खाने वाले हैं हराम को।"*
فَاِنْ جَاۗءُوْكَ	*"फिर अगर यह आप ﷺ के पास (अपना कोई मुक़दमा लेकर) आयें"*

فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ اَوْ اَعْرِضْ عَنْهُمْ ۚ

"तो आप ﷺ (को इख़्तियार है) ख्वाह उनके दरमियान फ़ैसला कर दें या उनसे ऐराज़ करें।"

आप ﷺ को यह इख़्तियार दिया जाता है कि आप चाहें तो उनका मुक़दमा सुनें और फ़ैसला कर दें और चाहें तो मुक़दमा लेने ही से इन्कार कर दें, क्योंकि उनकी नीयत दुरुस्त नहीं होती और वह आप ﷺ का फ़ैसला लेने में संजीदा नहीं होते। लिहाज़ा ऐसे लोगों पर अपना वक़्त ज़ाया करने की कोई ज़रूरत नहीं है। लेकिन यह अन्देशा भी था कि वह प्रोपोगंडा करेंगे कि देखो जी हम तो गये थे मुहम्मद (ﷺ) के पास मुक़दमा लेकर, यह कैसे नबी हैं कि मुक़दमे का फ़ैसला करने को ही तैयार नहीं! इस ज़िमन में भी अल्लाह तआला की तरफ़ से हुज़ूर ﷺ को इत्मिनान दिलाया जा रहा है कि आप ﷺ इसकी परवाह ना करें।

وَاِنْ تُعْرِضْ عَنْهُمْ فَلَنْ يَّضُرُّوْكَ شَيْـًٔا ۭ

"और अगर आप ﷺ उनसे ऐराज़ करेंगे तो वह आप ﷺ को कोई ज़र्र (नुक़सान) नहीं पहुँचा सकेंगे।"

यानि उनके मुखालफ़ाना प्रोपोगंडे से क़तअन फ़िक्रमन्द होने की ज़रूरत नहीं है।

وَاِنْ حَكَمْتَ فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ بِالْقِسْطِ ۭ

"और अगर आप ﷺ फ़ैसला करें तो उनके दरमियान इन्साफ़ के ऐन मुताबिक़ फ़ैसला करें।"

اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِيْنَ ۝۴۲

"यक़ीनन अल्लाह तआला इन्साफ़ करने वालों को पसंद करता है।"

आयत 43

وَكَيْفَ يُحَكِّمُوْنَكَ

"और (ऐ नबी ﷺ) यह लोग आप ﷺ को कैसे हाकिम बनाते हैं"

وَعِنْدَهُمُ التَّوْرٰىةُ

"जबकि इनके पास तौरात मौजूद है"

فِيْهَا حُكْمُ اللّٰهِ

"जिसमें अल्लाह का हुक्म मौजूद है"

यहाँ अल्लाह तआला ने यहूद की बदनीयती को बिल्कुल बेनक़ाब कर दिया है कि अगर उनकी नीयत दुरुस्त हो तो तौरात से रहनुमाई हासिल कर लें।

ثُمَّ يَتَوَلَّوْنَ مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ ۭ

"फिर भी वह उससे रूगरदानी करते हैं।"

وَمَآ اُولٰۗىِٕكَ بِالْمُؤْمِنِيْنَ ۝۴۳

"और हक़ीक़त में यह लोग मोमिन नहीं हैं।"

असल बात यह है कि यह ईमान से तही दस्त हैं, इनके दिल ईमान से खाली हैं। यह है इनका असल रोग।

आयात 44 से 50 तक

اِنَّآ اَنْزَلْنَا التَّوْرٰىةَ فِيْهَا هُدًى وَّنُوْرٌ ۚ يَحْكُمُ بِهَا النَّبِيُّوْنَ الَّذِيْنَ اَسْلَمُوْا لِلَّذِيْنَ
هَادُوْا وَالرَّبّٰنِيُّوْنَ وَالْاَحْبَارُ بِمَا اسْتُحْفِظُوْا مِنْ كِتٰبِ اللّٰهِ وَكَانُوْا عَلَيْهِ
شُهَدَاۗءَ ۚ فَلَا تَخْشَوُا النَّاسَ وَاخْشَوْنِ وَلَا تَشْتَرُوْا بِاٰيٰتِيْ ثَمَنًا قَلِيْلًا ۭ وَمَنْ لَّمْ
يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ ۝۴۴ وَكَتَبْنَا عَلَيْهِمْ فِيْهَآ اَنَّ النَّفْسَ
بِالنَّفْسِ ۙ وَالْعَيْنَ بِالْعَيْنِ وَالْاَنْفَ بِالْاَنْفِ وَالْاُذُنَ بِالْاُذُنِ وَالسِّنَّ بِالسِّنِّ ۙ

وَالْجُرُوْحَ قِصَاصٌ ؕ فَمَنْ تَصَدَّقَ بِهٖ فَهُوَ كَفَّارَةٌ لَّهٗ ؕ وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ
فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝٤٥ وَقَفَّيْنَا عَلٰٓى اٰثَارِهِمْ بِعِيْسَى ابْنِ مَرْيَمَ مُصَدِّقًا لِّمَا
بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرٰىةِ ۫ وَاٰتَيْنٰهُ الْاِنْجِيْلَ فِيْهِ هُدًى وَّنُوْرٌ ۙ وَّمُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ
يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرٰىةِ وَهُدًى وَّمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِيْنَ ۝٤٦ وَلْيَحْكُمْ اَهْلُ الْاِنْجِيْلِ بِمَآ
اَنْزَلَ اللّٰهُ فِيْهِ ؕ وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ۝٤٧ وَاَنْزَلْنَآ
اِلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ الْكِتٰبِ وَمُهَيْمِنًا عَلَيْهِ فَاحْكُمْ
بَيْنَهُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَآءَهُمْ عَمَّا جَآءَكَ مِنَ الْحَقِّ ؕ لِكُلٍّ جَعَلْنَا
مِنْكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا ؕ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَجَعَلَكُمْ اُمَّةً وَّاحِدَةً وَّلٰكِنْ لِّيَبْلُوَكُمْ فِيْ مَآ
اٰتٰىكُمْ فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرٰتِ ؕ اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ فِيْهِ
تَخْتَلِفُوْنَ ۝٤٨ وَاَنِ احْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَآءَهُمْ وَاحْذَرْهُمْ
اَنْ يَّفْتِنُوْكَ عَنْۢ بَعْضِ مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ اِلَيْكَ ؕ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاعْلَمْ اَنَّمَا يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ
يُّصِيْبَهُمْ بِبَعْضِ ذُنُوْبِهِمْ ؕ وَاِنَّ كَثِيْرًا مِّنَ النَّاسِ لَفٰسِقُوْنَ ۝٤٩ اَفَحُكْمَ
الْجَاهِلِيَّةِ يَبْغُوْنَ ؕ وَمَنْ اَحْسَنُ مِنَ اللّٰهِ حُكْمًا لِّقَوْمٍ يُّوْقِنُوْنَ ۝٥٠

सूरतुल मायदा का यह सातवाँ रुकूअ हुस्ने इत्तेफ़ाक़ से सात ही आयात पर मुश्तमिल है। इसमें बहुत सख्त तहदीद (प्रतिबन्ध), तम्बीह (चेतावनी) और धमकी है उन लोगों के लिये जो किसी आसमानी शरीअत पर ईमान के दावेदार हों और फिर उसके बजाये किसी और क़ानून के मुताबिक़ अपनी ज़िन्दगी गुज़ार रहे हों। क़ुरान हकीम की तवील सूरतों में कहीं-कहीं तीन-तीन आयतों के छोटे-छोटे ग्रुप मिलते हैं जो मायने व मफ़हूम के लिहाज़ से बहुत जामेअ होते हैं, जैसा कि सूरह आले इमरान की आयत 102, 103 और 104 हैं। अभी सूरतुल मायदा में भी तीन आयात पर मुश्तमिल निहायत जामेअ अहकामात का हामिल एक मक़ाम आयेगा। इसी तरह कहीं-कहीं सात-सात आयात का मजमुआ भी मिलता है। जैसे सूरतुल बक़रह के पाँचवें रुकूअ की सात आयात (40 से 46) बनी इसराइल से ख़िताब के ज़िमन में निहायत जामेअ हैं। यह दावत के इब्तदाई अंदाज़ पर मुश्तमिल हैं और दावत के बाब में बा-मंज़िला-ए-फ़ातिहा हैं। इसी तरह क़ानूने शरीअत की तन्फीज़, उसकी अहमियत और उससे पहलु तही पर वईद (चेतावनी) के ज़िमन में ज़ेरे मुताअला रुकूअ की सात आयात निहायत ताकीदी और जामेअ हैं, बल्कि यह मक़ाम इस मौज़ू पर क़ुरान हकीम का ज़रवा-ए-सनाम (climax) है।

आयत 44

"यक़ीनन हमने ही नाज़िल फ़रमायी थी तौरात"	اِنَّآ اَنْزَلْنَا التَّوْرٰىةَ
"उसमें हिदायत भी थी और नूर भी था।"	فِيْهَا هُدًى وَّنُوْرٌ ۚ
"उसके मुताबिक़ फ़ैसले करते थे अम्बिया"	يَحْكُمُ بِهَا النَّبِيُّوْنَ
"जो कि सब फ़रमाबरदार थे (अल्लाह के)"	الَّذِيْنَ اَسْلَمُوْا

ज़ाहिर है कि तमाम अम्बिया किराम अलै० ख़ुद भी अल्लाह तआला के फ़रमाबरदार थे।

"(और वह फ़ैसले करते थे) यहूदियों के लिये"	لِلَّذِيْنَ هَادُوْا

यानि अम्बिया किराम अ० यहूदियों के तमाम फ़ैसले तौरात (शरीअते मूसवी) के मुताबिक़ करते थे, जैसा की हदीस में है ((كَانَتْ بَنُوْ اِسْرَائِيْلَ تَسُوْسُهُمُ الْاَنْبِيَاءُ)) यानि बनी इसराइल की सियासत और हुकूमत के मामलात, इंतेज़ाम व अन्सराम (प्रबंध) अम्बिया के हाथ में होता था। इसलिये वही उनके माबैन नज़ाआत (झगड़ों) के फ़ैसले करते थे।

وَالرَّبّٰنِيُّوْنَ وَالْاَحْبَارُ — *"और दरवेश और उलमा"*

उनके यहाँ अल्लाह वाले सूफ़िया और उलमा व फ़ुक़हा भी तौरात ही के मुताबिक़ फ़ैसले करते थे।

بِمَا اسْتُحْفِظُوْا مِنْ كِتٰبِ اللّٰهِ — *"बसबब इसके कि वह किताबुल्लाह के निगरान बनाये गये थे"*

उन्हें ज़िम्मेदारी दी गयी थी कि उन्हें किताबुल्लाह की हिफ़ाज़त करनी है।

وَكَانُوْا عَلَيْهِ شُهَدَآءَ — *"और वह उस पर गवाह थे।"*

فَلَا تَخْشَوُا النَّاسَ وَاخْشَوْنِ — *"(तो उनसे कह दिया गया था कि) तुम लोगों से मत डरो और मुझसे डरो"*

وَلَا تَشْتَرُوْا بِاٰيٰتِيْ ثَمَنًا قَلِيْلًا — *"और मेरी आयात को हक़ीर सी क़ीमत पर फ़रोख्त ना करो।"*

यानि अल्लाह का तय करदा क़ानून मौजूद है, उसके मुताबिक़ फ़ैसले करो। लोगों को पसंद हो या नापसंद, इससे तुम्हारा बिल्कुल कोई सरोकार नहीं होना चाहिये। अब आ रही है वह काँटे वाली बात:

وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ ۝۴۴ — *"और जो अल्लाह की उतारी हुई शरीअत के मुताबिक़ फ़ैसले नहीं करते वही तो काफ़िर हैं।"*

बक़ौल अल्लामा इक़बाल:

बुतों से तुझको उम्मीदें, ख़ुदा से नाउम्मिदी
मुझे बता तो सही और काफ़िरी क्या है?

आयत 45

وَكَتَبْنَا عَلَيْهِمْ فِيْهَآ — *"और हमने लिख दिया था उन पर उस (तौरात) में"*

اَنَّ النَّفْسَ بِالنَّفْسِ — *"कि जान के बदले जान"*

وَالْعَيْنَ بِالْعَيْنِ — *"और आँख के बदले आँख"*

وَالْاَنْفَ بِالْاَنْفِ — *"और नाक के बदले नाक"*

وَالْاُذُنَ بِالْاُذُنِ — *"और कान के बदले कान"*

وَالسِّنَّ بِالسِّنِّ — *"और दांत के बदले दांत"*

"और इस तरह ज़ख्मों का बदला भी होगा बराबर।" وَالْجُرُوْحَ قِصَاصٌ ؕ

"फिर जो कोई उसको माफ़ कर दे तो यह उसके लिये (गुनाहों का) कफ्फ़ारा होगा।" فَمَنْ تَصَدَّقَ بِهٖ فَهُوَ كَفَّارَةٌ لَّهٗ ؕ

किसी ने एक शख्स का कान काट दिया, अब वह जवाबन उसका कान काटने का हक़दार है, लेकिन अगर वह क़िसास नहीं लेता और माफ़ कर देता है तो उसे अपने बहुत से गुनाहों का कफ्फ़ारा बना लेगा। इसका मफ़हूम यह भी हो सकता है कि मुजरिम को जब माफ़ कर दिया जाये तो उसके ज़िम्मे से वह गुनाह धुल गया।

"और जो फ़ैसले नहीं करते अल्लाह की उतारी हुई शरीअत के मुताबिक़ वही तो ज़ालिम हैं।" وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ﴿۴۵﴾

और ज़ालिम यहाँ बा-मायने मुशरिक है, क्योंकि अल्लाह तआला ने शिर्क को ज़ुल्मे अज़ीम क़रार दिया है: { اِنَّ الشِّرْكَ لَظُلْمٌ عَظِيْمٌ} (लुक़मान:13) अब देखिये, एक क़ानून अल्लाह का है और एक इंसानों का। फिर इंसानों के भी मुख्तलिफ़ क़वानीन हैं, एक Roman Law है, एक पाकिस्तानी क़ानून है, एक रिवाज पर मब्नी क़ानून है। अब देखना यह है कि आप फ़ैसला किस क़ानून के मुताबिक़ कर रहे हैं? अल्लाह के क़ानून के तहत या किसी और क़ानून के मुताबिक़? अगर आपने अल्लाह के क़ानून के साथ-साथ किसी और क़ानून को भी मान लिया या अल्लाह के क़ानून के मुक़ाबले में किसी और क़ानून को तरजीह दी तो यह शिर्क है।

आयत 46

"और हमने उनके पीछे उन्हीं के नक़्शे क़दम पर ईसा (अलै०) इब्ने मरयम को भेजा" وَقَفَّيْنَا عَلٰٓى اٰثَارِهِمْ بِعِيْسَى ابْنِ مَرْيَمَ

"(वह आये) तस्दीक़ करते हुए उसकी जो उनके सामने मौजूद था तौरात में से" مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرٰىةِ ۫

"और हमने उन्हें इंजील अता की, उसमें हिदायत भी थी और नूर भी था" وَاٰتَيْنٰهُ الْاِنْجِيْلَ فِيْهِ هُدًى وَّنُوْرٌ ۙ

"और वह (इंजील भी) तस्दीक़ कर रही थी उसकी जो तौरात में से उसके सामने मौजूद था" وَّمُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرٰىةِ

"और वह हिदायत (रहनुमाई) और नसीहत थी तक़वा वालों के लिये।" وَهُدًى وَّمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِيْنَ ﴿۴۶﴾ ؕ

आयत 47

"और चाहिये कि इंजील के मानने वाले फ़ैसला करें उसके मुताबिक़ जो अल्लाह ने उसमें नाज़िल किया है।" وَلْيَحْكُمْ اَهْلُ الْاِنْجِيْلِ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فِيْهِ ؕ

"और जो लोग नहीं फ़ैसला करते अल्लाह के उतारे हुए अहकामात व क़वानीन के मुताबिक़, वही तो फ़ासिक़ हैं।" وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ﴿۴۷﴾

वही तो सरकश हैं, वही तो नाफ़रमान हैं, वही तो नाहंजार हैं। गौर कीजिये एक रुकूअ में तीन दफ़ा यह अल्फ़ाज़ दोहराये गये हैं:

وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ ﴿۴۴﴾ وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ﴿۴۵﴾ وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ﴿۴۷﴾

इन आयाते क़ुरानिया को सामने रखिये और मिल्लते इस्लामिया की मौजूदा कैफ़ियत का जायज़ा लीजिये कि दुनिया में कितने मुमालिक हैं जहाँ अल्लाह का क़ानून नाफ़िज़ है? आज रुए ज़मीन पर कोई एक भी मुल्क ऐसा नहीं है जहाँ शरीअते इस्लामी पूरे तौर पर नाफ़िज़ हो और इस्लाम का मुकम्मल निज़ाम क़ायम हो। अगरचे हम इन्फ़रादी ऐतबार से मुस्लमान हैं लेकिन हमारे निज़ाम काफ़िराना हैं।

आयत 48

وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ

"और (अब ऐ नबी ﷺ) हमने आप पर किताब नाज़िल फ़रमायी हक़ के साथ"

مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ الْكِتٰبِ وَمُهَيْمِنًا عَلَيْهِ

"जो अपने से पहली किताबों की तस्दीक़ करती है और उन पर निगरान है"

यह किताब तौरात और इंजील की मिस्दाक़ भी है और मुसद्दक़ भी। और इसकी हैसियत कसौटी की है। पहली किताबों के अन्दर जो तहरीफ़ात हो गयी थीं अब उनकी तसहीह (correction) इसके ज़रिये से होगी।

فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ

"तो (आप ﷺ) भी फ़ैसला करें इनके दरमियान इस (क़ानून) के मुताबिक़ जो अल्लाह ने नाज़िल फ़रमाया है"

وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَآءَهُمْ عَمَّا جَآءَكَ مِنَ الْحَقِّ

"और मत पैरवी करें उनकी ख्वाहिशात की, इस हक़ को छोड़ कर जो आ चुका है आप (ﷺ) के पास।"

لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا

"तुम में से हर एक के लिये हमने एक शरीअत और एक राहे अमल तय कर दी है।"

जहाँ तक शरीअत का ताल्लुक़ है सबको मालूम है कि शरीअते मूसवी (अलै०) शरीअते मुहम्मदी ﷺ से मुख्तलिफ़ थी। मज़ीद बराँ रसूलों के मिन्हाज (तरीक़े कार) में भी फ़र्क़ था। मसलन हज़रत मूसा अलै० के मिन्हाज में हम देखते हैं कि आप (अलै०) एक मुस्लमान उम्मत (बनी इसराइल) के लिये भेजे गये थे। वह उम्मत जोकि दबी हुई थी, पिसी हुई थी, गुलाम थी। उसमें अख्लाक़ी खराबियाँ भी थीं, दीनी ऐतबार से ज़ौफ़ (दोष) भी था, वह आले फ़िरऔन के ज़ुल्म-ओ-सितम का तख़्ता-ए-मश्क़ बनी हुई थी। चुनाँचे हज़रत मूसा अलै० के मक़सदे बेअसत में यह बात भी शामिल थी कि एक बिगड़ी हुई मुस्लमान उम्मत को काफ़िरों के तसल्लुत और गलबे से निजात दिलायें। इसका एक ख़ास तरीक़े कार अल्लाह तआला की तरफ़ से उन्हें बताया गया। हज़रत ईसा अलै० भी एक मुस्लमान उम्मत के लिये मबऊस किये गये, यानि यहूदियों ही की तरफ़। इस क़ौम में नज़रियाती फ़तूर आ चुका था, उनके मआशरे में अख्लाक़ी व रूहानी गिरावट इन्तहा को पहुँच चुकी थी। उनके उलमा की तवज्जो भी दीन के सिर्फ़ ज़ाहिरी अहकाम और क़ानूनी पहलुओं पर रह गयी थी और वह असल मक़ासिदे दीन को भूल चुके थे। दीन की असल रूह निगाहों से ओझल हो गयी थी। इस सारे बिगाड़ की इस्लाह के लिये हज़रत मसीह अलै० को अल्लाह तआला ने एक ख़ास मन्हज, एक ख़ास तरीक़े कार अता फ़रमाया। मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ को उन लोगों में मबऊस किया गया जो मुशरिक थे, अनपढ़ थे, किसी नबी के नाम से नावाक़िफ़ थे सिवाये हज़रत इब्राहीम अलै० के। उनका अहतराम भी वह अपने जद्दे अमजद के तौर पर करते थे, एक नबी के तौर पर नहीं। कोई शरीअत उनमें मौजूद नहीं थी, कोई किताब उनके पास नहीं थी। गोया "ضَلَّ ضَلَالًا بَعِيْدًا" मुजस्सम तस्वीर! आप ﷺ ने अपनी दावत व तब्लीग के ज़रिये उनमें से सहाबा किराम रज़ि० की एक अज़ीम जमात पैदा की, उन्हें हिज़बुल्लाह बनाया,

और फिर उस जमात को साथ लेकर आप ﷺ ने कुफ़्र, शिर्क और अइम्मा-ए-कुफ़्र के ख़िलाफ़ जिहाद व क़िताल किया, और बिलआख़िर अल्लाह के दीन को उस मआशरे में क़ायम कर दिया। यह मिन्हाज हैं मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ का। तो यह मफ़हूम है इस आयत का { لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا } "हमने तुम में से हर एक के लिये एक शरीअत और एक मिन्हाज (तरीक़े कार, मन्हजे अमल) मुक़र्रर किया है।" इस लिहाज़ से यह आयत बहुत अहम है।

وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَجَعَلَكُمْ اُمَّةً وَّاحِدَةً

"और अल्लाह चाहता तो तुम सबको एक ही उम्मत बना देता"

وَّلٰكِنْ لِّيَبْلُوَكُمْ فِيْ مَآ اٰتٰىكُمْ

"मगर उसने चाहा कि वह उस चीज़ में तुम्हारी आज़माइश करे जो उसने तुमको अता की"

यानि अल्लाह की हिकमत इसकी मुतक़ाज़ी हुई (अल्लाह ने चाहा) कि जिसको जो-जो कुछ दिया गया है उसके हवाले से उसको आज़माये। चुनाँचे अब हमारे लिये असल उसवा ना तो हज़रत मूसा अलै० हैं और ना ही हज़रत ईसा अलै०, बल्कि { لَقَدْ كَانَ لَكُمْ فِيْ رَسُوْلِ اللّٰهِ اُسْوَةٌ حَسَنَةٌ } (अहज़ाब:21) के मिस्दाक़ हमारे लिये उसवा हैं तो सिर्फ़ मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की ज़ाते मुबारका है। हज़रत ईसा अलै० ने अगर शादी नहीं की तो यह हमारे लिये उसवा नहीं है। हमें तो हुज़ूर ﷺ के फ़रमान को पेशे नज़र रखना है, जिन्होंने फ़रमाया: ((اَلنِّكَاحُ مِنْ سُنَّتِيْ)) और फिर फ़रमाया: ((فَمَنْ رَغِبَ عَنْ سُنَّتِيْ فَلَيْسَ مِنِّي))। तो वाक़िया यह है कि तमाम अम्बिया अल्लाह ही की तरफ़ से मबऊस थे, और हर एक के लिये जो भी तरीक़ा अल्लाह तआला ने मुनासिब समझा वह उनको अता किया, अलबत्ता हमारे लिये क़ाबिले तक़लीद मिन्हाजे नबवी ﷺ है। अब हम पर फ़र्ज़ है कि इस मन्हजे इन्क़लाबे नबवी ﷺ का गहरा शऊर हासिल करें, फिर इस रास्ते पर उसी तरह चलें जिस तरह हुज़ूर ﷺ चले। जिस तरह आप ﷺ ने दीन को क़ायम किया, ग़ालिब किया, एक निज़ाम बरपा किया, फिर उस निज़ाम के तहत अल्लाह का क़ानून नाफ़िज़ किया, उसी तरह हम भी अल्लाह के दीन को क़ायम करने की कोशिश करें।

فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرٰتِ

"तो तुम नेकियों में एक-दूसरे से आगे निकलने की कोशिश करो।"

اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا

"अल्लाह ही की तरफ़ तुम सबका लौटना है"

فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ فِيْهِ تَخْتَلِفُوْنَ ﴿٤٨﴾

"तो वह तुम्हें जितला देगा उन चीज़ों के बारे में जिनमें तुम इख्तिलाफ़ करते रहे थे।"

आयत 49

وَاَنِ احْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ

"और फ़ैसले कीजिये उनके माबैन उस (शरीअत) के मुताबिक़ जोकि अल्लाह ने उतारी है"

وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَآءَهُمْ

"और उनकी ख्वाहिशात की पैरवी ना कीजिये"

आज हमारा क्या हाल है? हम किन लोगों की ख्वाहिशात की पैरवी कर रहे हैं? आज हम अहकामे इलाही को पसे-पुश्त डाल कर अपने सियासी पेशवाओं की ख्वाहिशात की पैरवी कर रहे हैं। वह जो चाहते हैं क़ानून बना देते हैं, जो चाहते हैं फ़ैसला कर देते हैं और पूरी क़ौम उसकी पाबन्द होती है। हम इस जाल से इसी सूरत में निकल सकते हैं कि एक ज़बरदस्त जमात बनायें, ताक़त पैदा करें, एक भरपूर तहरीक उठायें, क़ुर्बानियाँ दें, जानें लड़ायें ताकि यह मौजूदा निज़ाम तब्दील हो, अल्लाह का दीन क़ायम हो, और फिर उस दीन के मुताबिक़ हमारे फ़ैसले हों। यहाँ हुज़ूर ﷺ को एक

बार फिर से ताकीद की जा रही है कि आप ﷺ उनकी ख्वाहिशात की पैरवी मत कीजिये और अल्लाह के अहकाम के मुताबिक़ फ़ैसले कीजिये।

وَاحْذَرْهُمْ اَنْ يَّفْتِنُوْكَ عَنْۢ بَعْضِ مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ اِلَيْكَ

"और उनसे होशियार रहिये, ऐसा ना हो कि यह लोग आपको उनमें से किसी चीज़ से बिचला दें जो अल्लाह ने आप पर नाज़िल की हैं।"

यानि हर तरफ़ से दबाव आयेगा, लेकिन आप ﷺ को साबित क़दमी से खड़े रहना है उस शरीअत पर जो अल्लाह तआला ने आप ﷺ पर नाज़िल फ़रमायी है।

فَاِنْ تَوَلَّوْا

"फिर अगर वह रुगरदानी करें"

اَنَّمَا يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّصِيْبَهُمْ بِبَعْضِ ذُنُوْبِهِمْ

"तो जान लीजिये कि अल्लाह तआला उन्हें उनके बाज़ गुनाहों की सज़ा देना चाहता है।"

यह दरअसल लरज़ा देने वाला मक़ाम है। अगर हम अपने इस मुल्क के अन्दर इस्लाम को क़ायम नहीं करते और हमारी सारी कोशिशों के बावजूद दीन नाफ़िज़ नहीं हो रहा तो इसका मतलब यह है कि अल्लाह के अज़ाब का कोई कोड़ा मुक़द्दर हो चुका है। वाज़ेह अल्फ़ाज़ में फ़रमाया जा रहा है कि अगर वह अल्लाह के अहकामात से मुँह मोड़ें, शरीअत के फ़ैसलों का इन्कार करें तो जान लो कि अल्लाह तआला दरहक़ीक़त उनके गुनाहों की पादाश में उन पर अज़ाब नाज़िल करना चाहता है और {اِنَّ بَطْشَ رَبِّكَ لَشَدِيْدٌ} (अल बुरूज:12) के मिस्दाक़ उन्हें कोई सज़ा देना चाहता है।

وَاِنَّ كَثِيْرًا مِّنَ النَّاسِ لَفٰسِقُوْنَ

"और इसमें तो कोई शक ही नहीं है कि लोगों में से अक्सर फ़ासिक़ (नाफ़रमान) हैं।"

आयत 50

اَفَحُكْمَ الْجَاهِلِيَّةِ يَبْغُوْنَ

"तो क्या यह जाहिलियत के फ़ैसले चाहते हैं?"

जाहिलियत से मुराद हुज़ूर ﷺ की बेअसत से पहले का दौर है। यानि क्या क़ानूने इलाही नाज़िल हो जाने के बाद भी यह लोग जाहिलियत के दस्तूर, अपनी रिवायात और अपनी रसुमात पर अमल करना चाहते हैं? जैसा कि हिन्दुस्तान में मुस्लमान ज़मींदार अँगरेज़ की अदालत में खड़े होकर कह देते थे कि हमें अपनी विरासत के मुक़द्दमात में शरीअत का फ़ैसला नहीं चाहिये बल्कि रिवाज का फ़ैसला चाहिये।

وَمَنْ اَحْسَنُ مِنَ اللّٰهِ حُكْمًا لِّقَوْمٍ يُّوْقِنُوْنَ ۝٥٠

"और अल्लाह के हुक्म (और फ़ैसले) से बेहतर किसका हुक्म हो सकता है उन लोगों के लिये जो यक़ीन रखने वाले हैं।"

अल्लाह तआला हमें उस यक़ीन और ईमाने हक़ीक़ी की दौलत से सरफ़राज़ फ़रमाये। (आमीन)

आयात 51 से 56 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْيَهُوْدَ وَالنَّصٰرٰٓى اَوْلِيَآءَ ۘ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ۭ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاِنَّهٗ مِنْهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝٥١ فَتَرَى الَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ يُّسَارِعُوْنَ فِيْهِمْ يَقُوْلُوْنَ نَخْشٰٓى اَنْ تُصِيْبَنَا دَاۗىِٕرَةٌ ۭ فَعَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّاْتِيَ بِالْفَتْحِ اَوْ اَمْرٍ مِّنْ عِنْدِهٖ فَيُصْبِحُوْا عَلٰي مَآ اَسَرُّوْا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ نٰدِمِيْنَ ۝٥٢ وَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَهٰٓؤُلَاۗءِ الَّذِيْنَ اَقْسَمُوْا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ ۙ اِنَّهُمْ لَمَعَكُمْ ۭ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فَاَصْبَحُوْا خٰسِرِيْنَ ۝٥٣ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ

اٰمَنُوْا مَنْ يَّرْتَدَّ مِنْكُمْ عَنْ دِيْنِهٖ فَسَوْفَ يَاْتِى اللّٰهُ بِقَوْمٍ يُّحِبُّهُمْ وَيُحِبُّوْنَهٗٓ اَذِلَّةٍ
عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ اَعِزَّةٍ عَلَى الْكٰفِرِيْنَ يُجَاهِدُوْنَ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَلَا يَخَافُوْنَ لَوْمَةَ
لَآئِمٍ ۭ ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَآءُ ۭ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝ اِنَّمَا وَلِيُّكُمُ اللّٰهُ
وَرَسُوْلُهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوا الَّذِيْنَ يُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَهُمْ رٰكِعُوْنَ
۝ وَمَنْ يَّتَوَلَّ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فَاِنَّ حِزْبَ اللّٰهِ هُمُ الْغٰلِبُوْنَ ۝

आयत 51

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْيَهُوْدَ وَالنَّصٰرٰٓى اَوْلِيَآءَ

"ऐ ईमान वालो! यहूद व नसारा को अपना दिली दोस्त (हिमायती और पुश्त पनाह) ना बनाओ।"

بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ۭ

"वह आपस में एक-दूसरे के दोस्त हैं।"

उनमें से बाज़, बाज़ के पुश्तपनाह और मददगार हैं। यह दरहक़ीक़त एक पेशनगोई थी जो इस दौर में आकर पूरी हुई है। जब क़ुरान नाज़िल हुआ तो सूरते हाल वह थी जो हम क़ब्ल अज़ (इस सूरत की आयत 14 में) पढ़ आये हैं: {فَاَغْرَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَآءَ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ۭ} "पस हमने उनके माबैन अदावत और बुग्ज़ की आग भड़का दी रोज़े क़यामत तक के लिये।" चुनाँचे ईसाईयों और यहूदियों के माबैन हमेशा शदीद दुश्मनी रही है और आपस में कश्त व खून होता रहा है, लेकिन ज़ेरे नज़र अल्फ़ाज़ {بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ۭ} में जो पेशनगोई थी वह बीसवीं सदी में आकर पूरी हुई है। बाल्फोर्ड डिक्लेरेशन (1917 ई०) के बाद की सूरते हाल में उनका बाहमी गठजोड़ शुरू हुआ, जिसके नतीजे में ब्रितानिया और अमेरिका के ज़ेरे असर इसराइल की हुकूमत क़ायम हुई, और अब भी अगर वह क़ायम है तो असल में उन्हीं ईसाई मुल्कों की पुश्तपनाही की वजह से क़ायम है। ईसाई अब यहूदियों की इसलिये पुश्तपनाही कर रहे हैं कि उनकी सारी मईशत यहूदी बैंकारों के ज़ेरे तसल्लुत है। ईसाईयों की मईशत पर यहूदियों के क़ब्ज़े की वजह से यहूद व नसारा का यह गठजोड़ इस दर्जा मुस्तहकम हो चुका है कि आज ईसाईयों की पूरी अस्करी (Military) ताक़त यहूदियों की पुश्त पर है।

وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاِنَّهٗ مِنْهُمْ ۭ

"और तुम में से जो कोई उनसे दिली दोस्ती रखेगा तो वह उन्हीं में से होगा।"

यानि जो कोई उनसे दोस्ती के मुआहिदे करेगा, उनसे नुसरत व हिमायत का तलबगार होगा, हमारी निगाहों में वह यहूदी या नसरानी शुमार होगा।

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝

"यक़ीनन अल्लाह ऐसे ज़ालिमों को हिदायत नहीं देता।"

आज हमारे अक्सर मुस्लमान मुमालिक की पोलिसियाँ क्या हैं और इस सिलसिले में क़ुरान का फ़तवा क्या है, वह आपके सामने है।

आयत 52

فَتَرَى الَّذِيْنَ فِىْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ

"तो तुम देखते हो उन लोगों को जिनके दिलों में रोग है"

يُّسَارِعُوْنَ فِيْهِمْ

"वह उन्हीं के अन्दर घुसने की कोशिश करते रहते हैं"

फलाँ मुल्क से दोस्ती का मुआहिदा, फलाँ से मदद की दरख्वास्त, फलाँ से हिमायत की तवक्क़ो, उनकी सारी भाग-दौड़, तगो दो (कोशिशें), खारजा पालिसी "يُّسَارِعُوْنَ فِيْهِمْ" की अमली तस्वीर है। इसलिये कि उनके दिलों में रोग यानि निफ़ाक़ है। अगर अल्लाह पर ईमान हो, ऐतमाद और यक़ीन हो, उससे ख़ुलूस और इख्लास का रिश्ता हो तो फिर उसी से नुसरत व

हिमायत की उम्मीद हो और {اِنْ تَنْصُرُوا اللّٰهَ يَنْصُرْكُمْ} (सूरह मुहम्मद:7) के वादे पर यक़ीन हो!

يَقُوْلُوْنَ نَخْشٰٓى اَنْ تُصِيْبَنَا دَآئِرَةٌ

"वह कहते हैं हमें अन्देशा है कि हम गर्दिशे ज़माना (और किसी मुसीबत के चक्कर) में ना फँस जायें।"

यानि हम यहूद व नसारा से इसलिये ताल्लुक़ात अस्तवार (मज़बूत) कर रहे हैं कि कल फ़लां किसी नागहानी आफ़त से बच सकें।

فَعَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّاْتِيَ بِالْفَتْحِ اَوْ اَمْرٍ مِّنْ عِنْدِهٖ

"तो बहुत मुमकिन है अल्लाह तआला जल्द ही फ़तह ले आये या अपने पास से कोई और फ़ैसला सादिर फ़रमा दे"

فَيُصْبِحُوْا عَلٰى مَآ اَسَرُّوْا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ نٰدِمِيْنَ ۝٥٢

"तो फिर जो कुछ वह अपने दिलों में छुपाये हुए हैं उस पर उन्हें नादिम होना पड़े।"

उन्हें मालूम हो जायेगा कि जिनकी दोस्ती का सहारा उन्होंने अपने ज़अम (दावे) में ले रखा था वही उन्हें धोखा दे रहे हैं, *जिन पर तकिया था वही पत्ते हवा देने लगे!*

आयत 53

وَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَهٰٓؤُلَآءِ الَّذِيْنَ اَقْسَمُوْا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ ۙ اِنَّهُمْ لَمَعَكُمْ ۭ

"और (उस वक़्त) अहले ईमान कहेंगे क्या यह वही लोग हैं जो अल्लाह की क़समें खा-खा कर कहते थे कि वह तो तुम्हारे साथ हैं।"

حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فَاَصْبَحُوْا خٰسِرِيْنَ ۝٥٣

"उनके तमाम आमाल अकारत (waste) हो जाएँगे और वह ख़सारे वाले बन कर रह जाएँगे।"

अब जो तीन आयतें आ रही हैं इनमें उन अहले ईमान का ज़िक्र है जो पूरे ख़ुलूस व इख़्लास के साथ अल्लाह के रास्ते में जद्दो-जहद कर रहे हैं। अल्लाह तआला हम सबको भी तौफ़ीक़ दे कि कमर हिम्मते कस कर अल्लाह के दीन को ग़ालिब करने के लिये उठ खड़े हों। और अल्लाह तआला हमारे दिलों में यह अहसास पैदा फ़रमा दे कि उसकी शरीअत को नाफ़िज़ करना है और अल् काफ़िरून, अज़्ज़ालिमून और अल् फ़ासिक़ून (अल् मायदा:44, 45 और 47) की सफ़ों से बाहर निकलना हैं। इस तरह की जद्दो-जहद में मेहनत करना पड़ती है, मुश्किलात बर्दाश्त करना पड़ती हैं, तकालीफ़ सहना पड़ती हैं। ऐसे हालात में बाज़ अवक़ात इन्सान के क़दम लड़खड़ाने लगते हैं और अज़म (वादे) व हिम्मत में कुछ कमज़ोरी आने लगती है। ऐसे मौक़े पर इस राह के मुसाफ़िरों की एक ख़ास ज़हनी और नफ्सियाती कैफ़ियत होती है। इस हवाले से यह तीन आयात निहायत अहम और जामेअ हैं।

आयत 54

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَنْ يَّرْتَدَّ مِنْكُمْ عَنْ دِيْنِهٖ

"ऐ ईमान वालो! जो कोई भी फिर गया तुम में से अपने दीन से"

فَسَوْفَ يَاْتِي اللّٰهُ بِقَوْمٍ

"जिन्हें अल्लाह महबूब रखेगा और वह उसे महबूब रखेंगे"	يُحِبُّهُمْ وَيُحِبُّوْنَهٗٓ
"वह अहले ईमान के हक़ में बहुत नरम होंगे"	اَذِلَّةٍ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ
"काफ़िरों पर बहुत भारी होंगे"	اَعِزَّةٍ عَلَى الْكٰفِرِيْنَ
"अल्लाह की राह में जिहाद करेंगे"	يُجَاهِدُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ
"और किसी मलामत करने वाले की मलामत का कोई खौफ़ नहीं करेंगे।"	وَلَا يَخَافُوْنَ لَوْمَةَ لَآئِمٍ

यहाँ पर जो लफ्ज़ "يَّرْتَدَّ" आया है उसके मफ़हूम में एक तो क़ानूनी और ज़ाहिरी इरतदाद (apostasy) है। जैसे एक शख्स इस्लाम को छोड़ कर काफ़िर हो जाये, यहूदी या नसरानी हो जाये। यह तो बहुत वाज़ेह क़ानूनी इरतदाद है, लेकिन एक बातिनी इरतदाद भी है, यानि उलटे पाँव फिरने लगना, पसपाई इख़्तियार कर लेना। ऊपर इस्लाम का लिबादा तो ज्यों का त्यों है, लेकिन फ़र्क़ यह वाक़ेअ हो गया है कि पहले गलबा-ए-दीन की जद्दो-जहद में लगे हुए थे, मेहनतें कर रहे थे, वक़्त लगा रहे थे, ईसार (त्याग) कर रहे थे, इन्फ़ाक़ कर रहे थे, भाग-दौड़ कर रहे थे, और अब कोई आज़माइश आयी है तो ठिठक कर खड़े रह गये हैं। जैसे सूरतुल बक़रह (आयत:20) में इरशाद है: { كُلَّمَآ اَضَآءَ لَهُمْ مَّشَوْا فِيْهِ ۙ وَاِذَآ اَظْلَمَ عَلَيْهِمْ قَامُوْا } "जब ज़रा सी रोशनी होती है उन पर तो उसमें कुछ चल लेते हैं और जब उन पर अँधेरा छा जाता है तो खड़े हो जाते हैं।" अब कैफ़ियत यह है कि ना सिर्फ़ खड़े रह गये हैं बल्कि कुछ पीछे हट रहे हैं। ऐसी कैफ़ियत के बारे में फ़रमाया गया कि तुम यह ना समझो कि अल्लाह तुम्हारा मोहताज है, बल्कि तुम अल्लाह के मोहताज हो। तुम्हें अपनी निजात के लिये अपने इस फ़र्ज़ को अदा करना है। अगर तुमने पसपाई इख़्तियार की तो अल्लाह तआला तुम्हें हटायेगा और किसी दूसरी क़ौम को ले आयेगा, किसी और के हाथ में अपने दीन का झंडा थमा देगा।

यहाँ पर मोमिनीन सादिक़ीन के औसाफ़ के ज़िमन में जो तीन जोड़े आये हैं उन पर ज़रा दोबारा गौर करें:

(1) "अल्लाह उनसे मोहब्बत करेगा और वह अल्लाह से मोहब्बत करेंगे। (اللھم اجعلنا منھم)"	يُحِبُّهُمْ وَيُحِبُّوْنَهٗٓ
(2)वह अहले ईमान के हक़ में बहुत " काफ़िरों पर बहुत सख्त होंगे। , नरम होंगे"	اَذِلَّةٍ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ اَعِزَّةٍ عَلَى الْكٰفِرِيْنَ
(3) "अल्लाह की राह में जिहाद करेंगे और किसी मलामत करने वाले की मलामत का कोई खौफ़ नहीं करेंगे।"	يُجَاهِدُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَلَا يَخَافُوْنَ لَوْمَةَ لَآئِمٍ

यही मज़मून सूरह फ़तह में दूसरे अंदाज़ से आया है: { اَشِدَّآءُ عَلَي الْكُفَّارِ رُحَمَآءُ بَيْنَهُمْ} (आयत:29) "आपस में बहुत रहीम व शफ़ीक़, कुफ्फ़ार पर बहुत सख्त।" बक़ौले इक़बाल:

हो हल्क़ा-ए-याराँ तो बा-रेशम की तरह नर्म
रज़्मे हक़-ओ-बातिल हो तो फ़ौलाद है मोमिन!

उनके रिश्तेदार उनको समझाएँगे, दोस्त अहबाब नसीहतें करेंगे कि क्या हो गया है तुम्हें? दिमाग ख़राब हो गया है तुम्हारा? तुम fanatic हो गये हो? तुम्हें औलाद का ख्याल नहीं, अपने मुस्तक़बिल की फ़िक्र नहीं! मगर यह लोग किसी की कोई परवाह नहीं करेंगे, बस अपनी ही धुन में मगन होंगे। और उनकी कैफ़ियत यह होगी:

वापस नहीं फेरा कोई फ़रमान जूनून का

तन्हा नहीं लौटी कभी आवाज़ जर्स की
खैरियते जाँ, राहते तन, सेहते दामां
सब भूल गयीं मसलहतें अहले हवस की
इस राह में जो सब पे गुज़रती है सो गुज़री
तन्हा पसे ज़िन्दां, कभी रुसवा सरे बाज़ार
कड़के हैं बहुत शेख़ सरगोशा-ए-मिम्बर
गरजे हैं बहुत अहले हुक्म बर सरे दरबार
छोड़ा नहीं गैरों ने कोई नावके दशनाम
छूटी नहीं अपनों से कोई तर्ज़े मलामत
इस इश्क़, ना उस इश्क़ पे नादिम है मगर दिल
हर दाग है इस दिल में बजुज़ दागे नदामत!

यह एक किरदार है जिसको वाज़ेह करने के लिये दो-दो औसाफ़ के यह तीन जोड़े आये हैं। इनको अच्छी तरह ज़हननशीन कर लें और अल्लाह तआला से दुआ माँगे कि वह हमें इस किरदार को अमलन इख़्तियार करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये।

ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَآءُ ۭ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝۵۴

"यह अल्लाह का फ़ज़ल है, जिसको चाहे अता करता है, और अल्लाह बहुत वुसअत रखने वाला, सब कुछ जानने वाला है।"

अल्लाह के खज़ानों में कमी नहीं है। अगर तुम अपने भाइयों, अज़ीज़ों, दोस्तों, साथियों और रफ़ीक़ों को देखते हो कि उन पर अल्लाह का बड़ा फ़ज़ल हुआ है, उन्होंने कैसे-कैसे मरहले सर कर लिये हैं, कैसी-कैसी बाज़ियाँ जीत लीं हैं, तो तुम भी अल्लाह से उसका फ़ज़ल तलब करो। अल्लाह तुम्हें भी हिम्मत देगा। इसलिये कि इस दीन के काम में इस क़िस्म का रश्क़ बहुत पसंदीदा है। जैसे हज़रत उमर रज़ि० को रश्क़ आया हज़रत अबु बक्र सिद्दीक़ रज़ि० पर। जब ग़ज़वा-ए-तबूक के लिये रसूल अल्लाह ﷺ ने अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने का हुक्म दिया तो आप (रज़ि०) ने सोचा कि आज तो मैं अबु बक्र रज़ि० से बाज़ी ले जाऊँगा, क्योंकि इत्तेफ़ाक़ से इस वक़्त मेरे पास खासा माल है। चुनाँचे उन्हों (रज़ि०) ने अपने पूरे माल के दो बराबर हिस्से किये, और पूरा एक हिस्सा यानि आधा माल लाकर हुज़ूर ﷺ के क़दमों में डाल दिया। लेकिन हज़रत अबु बक्र सिद्दीक़ रज़ि० के घर में जो कुछ था वह सब ले आये। यह देख कर हज़रत उमर रज़ि० ने कहा मैंने जान लिया कि अबु बक्र रज़ि० से आगे कोई नहीं बढ़ सकता। तो दीन के मामले में अल्लाह का हुक्म है: {فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرٰتِ ۭ} (अल् मायदा:48) यानि नेकियों में, खैर में, भलाई में एक-दूसरे से आगे निकलने की कोशिश में रहो!

अब फिर अहले ईमान को दोस्ताना ताल्लुक़ात के मैयार के बारे में ख़बरदार किया जा रहा है। अहले ईमान की दिली दोस्ती कुफ्फ़ार से, यहूद हनूद और नसारा से मुमकिन ही नहीं, इसलिये कि यह ईमान के मनाफ़ी है। अगर दीन की गैरत व हमियत होगी, अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की मोहब्बत दिल में होगी तो उनके दुश्मनों से दिली दोस्ती हो ही नहीं सकती।

आयत 55

اِنَّمَا وَلِيُّكُمُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوا

"तुम्हारे वली तो असल में बस अल्लाह, उसका रसूल (ﷺ) और अहले ईमान हैं"

तुम्हारे दोस्त, पुश्तपनाह, हिमायती, मौतमद (secretary) और राज़दार तो बस अल्लाह, उसका रसूल ﷺ और अहले ईमान हैं। और यह अहले ईमान भी पैदाइशी और क़ानूनी मुस्लमान नहीं, बल्कि:

الَّذِيْنَ يُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَهُمْ رٰكِعُوْنَ ۝۵۵

"जो नमाज़ क़ायम रखते हैं और ज़कात देते हैं झुक कर।"

यहाँ "وَهُمْ رٰكِعُوْنَ" का मतलब "वह रुकूअ करते हैं" सही नहीं है। यह दरहक़ीक़त ज़कात देने की कैफ़ियत है कि वह ज़कात अदा करते हैं फ़रवतनी (विनम्रता) करते हुए। हम सूरतुल बक़रह में पढ़ आये हैं कि सबसे बढ़ कर इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह के मुस्तहिक़ कौन लोग हैं: {.... لِلْفُقَرَآءِ الَّذِيْنَ اُحْصِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ} (आयत:273) जो अल्लाह के दीन के लिये हमावक़्त और हमातन मसरूफ़ हैं और उनके पास अब अपनी मआशी जद्दो-जहद के लिये वक़्त नहीं है। लेकिन वह फ़क़ीर तो नहीं कि आपसे झुक कर माँगे, यह तो आपको झुक कर, फ़रवतनी करते हुए उनकी मदद करना होगी। आप उन्हें दें और वह क़ुबूल कर लें तो आपको उनका ममनूने अहसान होना चाहिये।

आयत 56

وَمَنْ يَّتَوَلَّ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا

"और जो कोई दोस्ती क़ायम करेगा अल्लाह, उसके रसूल (ﷺ) और ईमान वालों के साथ"

यूँ समझ लें कि यहाँ यह फ़िक़रा महज़ूफ़ है: "तो वह शामिल हो जायेगा हिज़बुल्लाह (अल्लाह की पार्टी) में।"

فَاِنَّ حِزْبَ اللّٰهِ هُمُ الْغٰلِبُوْنَ ﴿۵۶﴾

"पस सुन लो कि हिज़बुल्लाह ही ग़ालिब रहने वाली है।"

यह शराइत पहले पूरी की जायें, इन तमाम मैयारात पर पूरा उतरा जाये, अल्लाह तआला के वादे पर ईमान रखा जाये, तो फिर यक़ीनन हिज़बुल्लाह ही ग़ालिब रहेगी।

आयात 57 से 66 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الَّذِيْنَ اتَّخَذُوْا دِيْنَكُمْ هُزُوًا وَّلَعِبًا مِّنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَالْكُفَّارَ اَوْلِيَآءَ ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿۵۷﴾

وَاِذَا نَادَيْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ اتَّخَذُوْهَا هُزُوًا وَّلَعِبًا ۭ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَعْقِلُوْنَ ﴿۵۸﴾ قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ هَلْ تَنْقِمُوْنَ مِنَّآ اِلَّآ اَنْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْنَا وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلُ ۙ وَاَنَّ اَكْثَرَكُمْ فٰسِقُوْنَ ﴿۵۹﴾ قُلْ هَلْ اُنَبِّئُكُمْ بِشَرٍّ مِّنْ ذٰلِكَ مَثُوْبَةً عِنْدَ اللّٰهِ ۭ مَنْ لَّعَنَهُ اللّٰهُ وَغَضِبَ عَلَيْهِ وَجَعَلَ مِنْهُمُ الْقِرَدَةَ وَالْخَنَازِيْرَ وَعَبَدَ الطَّاغُوْتَ ۭ اُولٰۗىِٕكَ شَرٌّ مَّكَانًا وَّاَضَلُّ عَنْ سَوَاۗءِ السَّبِيْلِ ﴿۶۰﴾ وَاِذَا جَاۗءُوْكُمْ قَالُوْٓا اٰمَنَّا وَقَدْ دَّخَلُوْا بِالْكُفْرِ وَهُمْ قَدْ خَرَجُوْا بِهٖ ۭ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا كَانُوْا يَكْتُمُوْنَ ﴿۶۱﴾ وَتَرٰى كَثِيْرًا مِّنْهُمْ يُسَارِعُوْنَ فِي الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ وَاَكْلِهِمُ السُّحْتَ ۭ لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ﴿۶۲﴾ لَوْلَا يَنْهٰىهُمُ الرَّبّٰنِيُّوْنَ وَالْاَحْبَارُ عَنْ قَوْلِهِمُ الْاِثْمَ وَاَكْلِهِمُ السُّحْتَ ۭ لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَصْنَعُوْنَ ﴿۶۳﴾ وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ يَدُ اللّٰهِ مَغْلُوْلَةٌ ۭ غُلَّتْ اَيْدِيْهِمْ وَلُعِنُوْا بِمَا قَالُوْا ۘ بَلْ يَدٰهُ مَبْسُوْطَتٰنِ ۙ يُنْفِقُ كَيْفَ يَشَاۗءُ ۭ وَلَيَزِيْدَنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ مَّآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ طُغْيَانًا وَّكُفْرًا ۭ وَاَلْقَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَاۗءَ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ۭ كُلَّمَآ اَوْقَدُوْا نَارًا لِّلْحَرْبِ اَطْفَاَهَا اللّٰهُ ۙ وَيَسْعَوْنَ فِي الْاَرْضِ فَسَادًا ۭ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الْمُفْسِدِيْنَ ﴿۶۴﴾ وَلَوْ اَنَّ اَهْلَ الْكِتٰبِ اٰمَنُوْا وَاتَّقَوْا لَكَفَّرْنَا عَنْهُمْ سَيِّاٰتِهِمْ وَلَاَدْخَلْنٰهُمْ جَنّٰتِ النَّعِيْمِ ﴿۶۵﴾ وَلَوْ اَنَّهُمْ اَقَامُوا التَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِمْ مِّنْ رَّبِّهِمْ لَاَكَلُوْا مِنْ فَوْقِهِمْ وَمِنْ تَحْتِ اَرْجُلِهِمْ ۭ مِنْهُمْ اُمَّةٌ مُّقْتَصِدَةٌ ۭ وَكَثِيْرٌ مِّنْهُمْ سَاۗءَ مَا يَعْمَلُوْنَ ﴿۶۶﴾

आयत 57

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الَّذِيْنَ اتَّخَذُوْا دِيْنَكُمْ هُزُوًا وَّلَعِبًا مِّنَ الَّذِيْنَ

"ऐ अहले ईमान, उन लोगों को अपना दोस्त ना बनाओ जिन्होंने तुम्हारे दीन को हँसी-मज़ाक और खेल बना रखा है उन

लोगों में से जिन्हें किताब दी गयी थी तुमसे पहले और दूसरे काफ़िरों में से भी।"

اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَالْكُفَّارَ اَوْلِيَآءَ ۚ

फिर वही बात फ़रमायी गयी कि मुशरिकीन और अहले किताब में से किसी को अपना वली और दोस्त ना बनाओ।

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो अगर तुम मोमिन हो।"

وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ○ ٥٧

आयत 58

"और जब तुम नमाज़ के लिये पुकारते हो तो यह लोग उसको मज़ाक और खेल बना लेते हैं।"

وَاِذَا نَادَيْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ اتَّخَذُوْهَا هُزُوًا وَّلَعِبًا ۭ

यानि अज़ान की आवाज़ सुन कर उसकी नक़लें उतारते हैं और तमस्खुर करते हैं।

"यह इस वजह से कि यह लोग अक़्ल से आरी (खाली) हैं।"

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَعْقِلُوْنَ ○ ٥٨

आयत 59

"(ऐ नबी ﷺ) इनसे कहिये कि ऐ किताब वालो"

قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ

"तुम किस बात का इन्तेक़ाम ले रहे हो हमसे?"

هَلْ تَنْقِمُوْنَ مِنَّآ

"सिवाय इसके कि हम ईमान लाये हैं अल्लाह पर"

اِلَّآ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ

"और (उस पर) जो हम पर नाज़िल किया गया"

وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْنَا

"और (उस पर भी) जो पहले नाज़िल किया गया"

وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلُ ۙ

"और हक़ीक़त यह है कि तुम्हारी अक्सरियत नाफ़रमानों पर मुश्तमिल है।"

وَاَنَّ اَكْثَرَكُمْ فٰسِقُوْنَ ○ ٥٩

आयत 60

"आप (ﷺ) कहिये क्या मैं तुम्हें बताऊँ कि अल्लाह यहाँ इससे भी बदतर सज़ा पाने वाले कौन हैं?"

قُلْ هَلْ اُنَبِّئُكُمْ بِشَرٍّ مِّنْ ذٰلِكَ مَثُوْبَةً عِنْدَ اللّٰهِ ۭ

"(वह लोग हैं) जिन पर अल्लाह ने लानत की"

مَنْ لَّعَنَهُ اللّٰهُ

"और जिन पर वह ग़ज़बनाक हुआ"

وَغَضِبَ عَلَيْهِ

"और जिनमें से उसने बन्दर और खंज़ीर बना दिये"

وَجَعَلَ مِنْهُمُ الْقِرَدَةَ وَالْخَنَازِيْرَ

"और जिन्होंने शैतान की बन्दगी की।" وَعَبَدَ الطَّاغُوْتَ ؕ

"यह सबके सब बहुत बुरे मुक़ाम में हैं और बहुत ज़्यादा भटके हुए हैं सीधे रास्ते से।" اُولٰٓئِكَ شَرٌّ مَّكَانًا وَّاَضَلُّ عَنْ سَوَآءِ السَّبِيْلِ ۝٦٠

आयत 61

"और जब वह तुम्हारे पास आते हैं तो कहते हैं हम ईमान ले आये" وَاِذَا جَآءُوْكُمْ قَالُوْٓا اٰمَنَّا

"हालाँकि वह दाख़िल भी हुए थे कुफ़्र के साथ और निकले भी हैं कुफ़्र के साथ।" وَّقَدْ دَّخَلُوْا بِالْكُفْرِ وَهُمْ قَدْ خَرَجُوْا بِهٖ ؕ

मेरे नज़दीक यह उन लोगों की तरफ़ इशारा है जिनका ज़िक्र सूरह आले इमरान (आयत 72) में आया है, जिन्होंने फ़ैसला किया था कि सुबह को ईमान लाओ और शाम को काफ़िर हो जाओ। उनके बारे में यहाँ फ़रमाया जा रहा है कि वह कुफ़्र के साथ दाख़िल हुए थे और कुफ़्र के साथ ही निकले हैं, एक लम्हे के लिये भी उन्हें ईमान की हलावत नसीब नहीं हुई। वह शऊरी तौर पर फ़ैसला कर चुके थे कि रहना तो हमें अपने दीन पर है, लेकिन इस्लाम की जो साख बन गयी है उसको नुक़सान पहुँचाने की खातिर हम यह धोखा और साज़िश कर रहे हैं।

"और अल्लाह ख़ूब जानता है जो वह छुपाये हुए थे।" وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا كَانُوْا يَكْتُمُوْنَ ۝٦١

आयत 62

"और तुम देखोगे उनमें से अक्सर को कि बहुत भाग-दौड़ करते हैं गुनाह और ज़ुल्म व ज़्यादती (के कामों) में" وَتَرٰى كَثِيْرًا مِّنْهُمْ يُسَارِعُوْنَ فِى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ

"और हराम के माल खाने में।" وَاَكْلِهِمُ السُّحْتَ ؕ

"बहुत ही बुरा अमल है जो वह कर रहे हैं!" لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝٦٢

आयत 63

"क्यों नहीं मना करते उन्हें उनके दरवेश (सूफ़ी और पीरो मुरशिद) और उलमा व फ़ुक़हा गुनाह की बात कहने से और हरामखोरी से?" لَوْلَا يَنْهٰهُمُ الرَّبّٰنِيُّوْنَ وَالْاَحْبَارُ عَنْ قَوْلِهِمُ الْاِثْمَ وَاَكْلِهِمُ السُّحْتَ ؕ

आज हमारे यहाँ भी अक्सर व बेशतर पीर अपने मुरीदों को हरामखोरी से मना नहीं करते। उन्हें उसमें से नज़राने मिल जाने चाहियें, अल्लाह-अल्लाह खैर सल्ला। कहाँ से खाया? कैसे खाया? इससे कोई बहस नहीं। हालाँकि अल्लाह वालों का काम तो बुराई से रोकना है, अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर का फ़रीज़ा सरअंजाम देना है।

"बहुत बुरा है वह काम जो वह कर रहे हैं।" لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَصْنَعُوْنَ ۝٦٣

आयत 64

وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ يَدُ اللّٰهِ مَغْلُوْلَةٌ ؕ

"और यहूद ने कहा कि अल्लाह का हाथ बंद हो गया।"

उनके इस क़ौल का मतलब यह था कि अल्लाह की रहमत जो हमारे लिये थी वह बंद हो गयी है, नबुवत की रहमत हमारे लिये मुख्तस (allocated) थी और अब यह दस्ते रहमत हमारी तरफ़ से बंद हो गया है। या इसका मफ़हूम यह भी हो सकता है जो मुनाफ़िक़ीन कहा करते थे कि अल्लाह हमसे क़र्ज़े हसना माँगता है तो गोया अल्लाह फ़क़ीर हो गया है (नाउज़ु बिल्लाह) और हम अग़निया (धनी) हैं। जवाब में फ़रमाया गया:

غُلَّتْ اَيْدِيْهِمْ

"उनके हाथ बंध गये हैं" या "बंध जायें उनके हाथ"

وَلُعِنُوْا بِمَا قَالُوْا ۘ

"और उन पर लानत है उसके सबब जो उन्होंने कहा"

بَلْ يَدٰهُ مَبْسُوْطَتٰنِ ۙ

"बल्कि अल्लाह के दोनों हाथ तो खुले हुए हैं"

يُنْفِقُ كَيْفَ يَشَآءُ ؕ

"वह जैसे चाहे खर्च करता है।"

وَلَيَزِيْدَنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ مَّآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ طُغْيَانًا وَّ كُفْرًا ؕ

"और यक़ीनन इज़ाफ़ा करेगा उनमें से अक्सर को सरकशी और कुफ़्र में जो कुछ (ऐ नबी ﷺ) नाज़िल किया गया है आप ﷺ पर आप ﷺ के रब की तरफ़ से।"

यानि ज़िद में आकर उन्होंने हक़ व सदाक़त पर मब्नी इस कलाम की मुखालफ़त शुरू कर दी है। मज़ीद बराँ अल्लाह तआला की तरफ़ से जैसे-जैसे जो-जो अहसानात भी आप ﷺ पर और आप ﷺ के साथियों पर हो रहे हैं, अल्लाह तआला मुसलमानों को जो ग़नीमतें दे रहा है, दीन को रफ़्ता-रफ़्ता जो गलबा हासिल हो रहा है, उसके हसद के नतीजे में उनकी ज़िद और हठधर्मी बढ़ती जा रही है। सुलह हुदैबिया के बाद तो ख़ास तौर पर अरब के अन्दर बहुत तेज़ी के साथ सूरते हाल बदलनी शुरू हो गयी थी। इसके नतीजे में बजाये इसके कि यह लोग समझ जाते कि वाक़ई यह अल्लाह की तरफ़ से हक़ है और यकसू होकर इसका साथ देते, उनके अन्दर की जलन और हसद की आग मज़ीद भड़क उठी।

وَاَلْقَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَآءَ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ؕ

"और हमने उनके माबैन क़यामत तक के लिये दुश्मनी और बुग़ज़ डाल दिया है।"

كُلَّمَآ اَوْقَدُوْا نَارًا لِّلْحَرْبِ اَطْفَاَهَا اللّٰهُ ۙ

"जब कभी यह आग भड़काते हैं जंग के लिये अल्लाह उसको बुझा देता है"

जंग की आग भड़काने के लिये यहूदी अक्सर साज़िशें करते रहते थे। ख़ास तौर पर ग़ज़वा-ए-अहज़ाब तो उन्हीं की साज़िशों के नतीजे में बरपा हुआ था। मदीने के यहूदी क़बाइले अरब के पास जा-जाकर, इधर-उधर वफ़द भेज कर लोगों को जमा करते थे कि आओ तुम बाहर से हमला करो, हम अन्दर से तुम्हारी मदद करेंगे। उनकी इन्हीं साज़िशों के बारे में फ़रमाया जा रहा है कि जब भी वह जंग की आग भड़काते हैं अल्लाह तआला उसे बुझा देता है।

وَيَسْعَوْنَ فِى الْاَرْضِ فَسَادًا ؕ

"और (फिर भी) यह ज़मीन में फ़साद मचाने के लिये भाग-दौड़ करते रहते हैं।"

وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الْمُفْسِدِيْنَ ۝۶۴

"और अल्लाह ऐसे मुफ़सिदों को पसंद नहीं करता।"

आयत 65

وَلَوْ اَنَّ اَهْلَ الْكِتٰبِ اٰمَنُوْا وَاتَّقَوْا — *"अगर अहले किताब ईमान ले आते और तक़वा की रविश इख़्तियार करते"*

لَكَفَّرْنَا عَنْهُمْ سَيِّاٰتِهِمْ — *"तो हम उनसे उनकी बुराईयों को दूर कर देते"*

وَلَاَدْخَلْنٰهُمْ جَنّٰتِ النَّعِيْمِ ﴿٦٥﴾ — *"और हम लाज़िमन उन्हें दाख़िल करते नेअमतों वाले बागों में।"*

जो आयत आगे आ रही है उस पर गौर कीजिये और उसे ख़ुद पर भी मुन्तबिक़ करके ज़रा सोचिये।

आयत 66

وَلَوْ اَنَّهُمْ اَقَامُوا التَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِمْ مِّنْ رَّبِّهِمْ — *"और अगर इन्होंने क़ायम किया होता तौरात को और इन्जील को और उसको जो कुछ नाज़िल किया गया था इन पर इनके रब की तरफ़ से"*

لَاَكَلُوْا مِنْ فَوْقِهِمْ وَمِنْ تَحْتِ اَرْجُلِهِمْ — *"तो यह खाते अपने ऊपर से भी और अपने क़दमों के नीचे से भी।"*

यानि हमने इन्हें तौरात इसलिये दी थी कि उसके अहकामात को नाफ़िज़ किया जाये। इसी सूरत के सातवें रुकूअ (आयत 44 से 50) में इसका मुफ़स्सल ज़िक्र हम पढ़ आये हैं कि किस तरह उन्हें हुक्म दिया गया था कि अपने फ़ैसले तौरात के अहकामात के मुताबिक़ करो। उससे अगला मरहला उस पूरे निज़ाम के निफ़ाज़ का था जो तौरात ने दिया था। इसी तरह हम पर भी फ़र्ज़ है कि हमने क़ुरान के निज़ाम को क़ायम करना है। उसके बारे में फ़रमाया जा रहा है, कि अगर उन्होंने अल्लाह का वह निज़ाम क़ायम किया होता तो उनके ऊपर से भी उनके रब की तरफ़ से नेअमतों की बारिश होती, और उनके क़दमों के नीचे से भी अल्लाह तआला की नेअमतों के धारे फूटते।

مِنْهُمْ اُمَّةٌ مُّقْتَصِدَةٌ — *"उनमें कुछ लोग हैं जो दरमियानी (यानि सीधी) राह पर हैं।"*

وَكَثِيْرٌ مِّنْهُمْ سَآءَ مَا يَعْمَلُوْنَ ﴿٦٦﴾ — *"लेकिन उनमें अक्सरियत उन लोगों की है जो बहुत बुरी हरकतें कर रहे हैं।"*

उनका अमल और रवैय्या निहायत गलत है।

आयात 67 से 77 तक

يٰٓاَيُّهَا الرَّسُوْلُ بَلِّغْ مَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ ۭ وَاِنْ لَّمْ تَفْعَلْ فَمَا بَلَّغْتَ رِسَالَتَهٗ ۭ وَاللّٰهُ يَعْصِمُكَ مِنَ النَّاسِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ﴿٦٧﴾ قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لَسْتُمْ عَلٰي شَيْءٍ حَتّٰى تُقِيْمُوا التَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِّنْ رَّبِّكُمْ ۭ وَلَيَزِيْدَنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ مَّآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ طُغْيَانًا وَّكُفْرًا ۚ فَلَا تَاْسَ عَلَي الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ﴿٦٨﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَادُوْا وَالصّٰبِـُٔوْنَ وَالنَّصٰرٰى مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ﴿٦٩﴾ لَقَدْ اَخَذْنَا مِيْثَاقَ بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ وَاَرْسَلْنَآ اِلَيْهِمْ رُسُلًا ۭ كُلَّمَا جَاۗءَهُمْ رَسُوْلٌۢ بِمَا لَا تَهْوٰٓى اَنْفُسُهُمْ ۙ فَرِيْقًا كَذَّبُوْا وَفَرِيْقًا يَّقْتُلُوْنَ ﴿٧٠﴾ وَحَسِبُوْٓا اَلَّا تَكُوْنَ فِتْنَةٌ فَعَمُوْا وَصَمُّوْا ثُمَّ تَابَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ ثُمَّ عَمُوْا وَصَمُّوْا كَثِيْرٌ مِّنْهُمْ ۭ وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِمَا يَعْمَلُوْنَ ﴿٧١﴾ لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ ۭ وَقَالَ الْمَسِيْحُ يٰبَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ اعْبُدُوا اللّٰهَ رَبِّيْ وَرَبَّكُمْ ۭ اِنَّهٗ مَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدْ حَرَّمَ اللّٰهُ عَلَيْهِ الْجَنَّةَ وَمَاْوٰىهُ النَّارُ ۭ وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ اَنْصَارٍ ﴿٧٢﴾ لَقَدْ كَفَرَ

الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ ثَالِثُ ثَلٰثَةٍ ۘ وَمَا مِنْ اِلٰهٍ اِلَّآ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ ۭ وَاِنْ لَّمْ يَنْتَهُوْا عَمَّا
يَقُوْلُوْنَ لَيَمَسَّنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝ اَفَلَا يَتُوْبُوْنَ اِلَى اللّٰهِ
وَيَسْتَغْفِرُوْنَهٗ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝ مَا الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ اِلَّا رَسُوْلٌ ۚ قَدْ خَلَتْ
مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ ۭ وَاُمُّهٗ صِدِّيْقَةٌ ۭ كَانَا يَاْكُلٰنِ الطَّعَامَ ۭ اُنْظُرْ كَيْفَ نُبَيِّنُ لَهُمُ
الْاٰيٰتِ ثُمَّ انْظُرْ اَنّٰى يُؤْفَكُوْنَ ۝ قُلْ اَتَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا لَا يَمْلِكُ لَكُمْ
ضَرًّا وَّلَا نَفْعًا ۭ وَاللّٰهُ هُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝ قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لَا تَغْلُوْا فِيْ دِيْنِكُمْ
غَيْرَ الْحَقِّ وَلَا تَتَّبِعُوْٓا اَهْوَاۗءَ قَوْمٍ قَدْ ضَلُّوْا مِنْ قَبْلُ وَاَضَلُّوْا كَثِيْرًا وَّضَلُّوْا عَنْ
سَوَاۗءِ السَّبِيْلِ ۝

आयत 67

يٰٓاَيُّهَا الرَّسُوْلُ بَلِّغْ مَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ ۭ

"ऐ रसूल (ﷺ) पहुँचा दीजिये जो कुछ नाज़िल किया गया है आप ﷺ की तरफ़ आप ﷺ के रब की जानिब से।"

وَاِنْ لَّمْ تَفْعَلْ فَمَا بَلَّغْتَ رِسَالَتَهٗ ۭ

"और अगर (बिलफ़र्ज़) आप ﷺ ने ऐसा ना किया तो गोया आप ﷺ ने उसकी रिसालत का हक़ अदा नहीं किया।"

अपने मज़मून के ऐतबार से यह बहुत सख्त आयत है। इससे यह भी पता चलता है कि अगर वही में कहीं रसूल अल्लाह ﷺ पर तनक़ीद नाज़िल हुई है तो वह भी क़ुरान में ज्यों की त्यों मौजूद है। ऐसा हरगिज़ नहीं कि ऐसी चीज़ों को छुपा लिया गया हो। तीसवें पारे में सूरतुल अबस की इब्तदाई आयात {عَبَسَ وَتَوَلّٰٓى} { اَنْ جَاۗءَهُ الْاَعْمٰى} भी वैसे ही मौजूद हैं जैसे नाज़िल हुई थीं। सूरह आले इमरान में भी हम पढ़ कर आये हैं कि हुज़ूर ﷺ को मुख़ातिब करके फ़रमाया गया: {.... لَيْسَ لَكَ مِنَ الْاَمْرِ شَيْءٌ}

(आयत:128)। इस तरह की आयात अपनी जगह पर मन व अन मौजूद हैं, और यह क़ुरान के महफ़ूज़ मिनल्लाह होने पर हुज्जत हैं। आयत ज़ेरे नज़र में तम्बीह की जा रही है कि वही-ए-इलाही में से कोई चीज़ किसी वजह से पहुँचने से रह ना जाये। लोगों के खौफ़ से या अपनी किसी मसलहत की वजह से बिलफ़र्ज़ अगर ऐसा हुआ तो गोया आप ﷺ फ़रीज़ा-ए-रिसालत की अदायगी में कोताही का सबूत देंगे। " اَلْعَبْدُ عَبْدٌ وَاِنْ تَرَقّٰى، وَالرَّبُّ رَبٌّ وَاِنْ تَنَزَّل!"

وَاللّٰهُ يَعْصِمُكَ مِنَ النَّاسِ ۭ

"और अल्लाह आप ﷺ की हिफ़ाज़त करेगा लोगों से।"

आपको लोगों से डरने की कोई ज़रूरत नहीं।

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ۝

"यक़ीनन अल्लाह काफ़िरों को राहयाब नहीं करता।"

आयत 68

قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لَسْتُمْ عَلٰى شَيْءٍ

"(ऐ नबी ﷺ) कह दीजिये: ऐ किताब वालों तुम किसी चीज़ पर नहीं हो"

तुम्हारी कोई हैसियत नहीं है, कोई मक़ाम नहीं है, कोई जड़ बुनियाद नहीं है, तुम हमसे हमकलाम होने के मुस्तहिक़ (हक़दार) नहीं हो।

حَتّٰى تُقِيْمُوا التَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِّنْ رَّبِّكُمْ ۭ

"जब तक तुम क़ायम ना करो तौरात और इन्जील को और जो कुछ नाज़िल किया गया है तुम पर तुम्हारे रब की तरफ़ से।"

अब अपने लिये इस आयत को आप इस तरह पढ़ लीजिये: {يٰٓاَهْلَ الْقُرْاٰنِ لَسْتُمْ عَلٰي شَيْءٍ حَتّٰي تُقِيْمُوا الْقُرْاٰنَ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِّنْ رَّبِّكُمْ} "ऐ क़ुरान के मानने वालो! तुम्हारी कोई हैसियत नहीं..... तुम समझते हो कि हम उम्मते मुस्लिमा हैं, अल्लाह वाले हैं, अल्लाह के लाड़ले और प्यारे हैं, अल्लाह के रसूल ﷺ के उम्मती हैं। लेकिन तुम देख रहे हो कि ज़िल्लत

व ख्वारी तुम्हारा मुक़द्दर बनी हुई है, हर तरफ़ से तुम पर यलगार है, इज़्ज़त व वक़ार नाम की कोई शय (चीज़) तुम्हारे पास नहीं रही। तुम कितनी ही तादाद में क्यों ना हो, दुनिया में तुम्हारी कोई हैसियत नहीं, और इससे भी ज़्यादा बेतौक़ीरी (बेईज़्ज़त होने) के लिये भी तैयार रहो। "तुम्हारी कोई असल नहीं जब तक तुम क़ायम ना करो क़ुरान को और उसके साथ जो कुछ मज़ीद तुम पर तुम्हारे रब की तरफ़ से नाज़िल हुआ है।" क़ुरान वही-ए-जली है। इसके अलावा हुज़ूर ﷺ को वही-ए-ख़फ़ी के ज़रिये से भी तो अहकामात मिलते थे और सुन्नते रसूल ﷺ वही-ए-ख़फ़ी का ज़हूर ही तो है। तो जब तक तुम किताब व सुन्नत का निज़ाम क़ायम नहीं करते, तुम्हारी कोई हैसियत नहीं। यह भी याद रहे कि "या अहलल क़ुरान" का ख़िताब ख़ुद हुज़ूर ﷺ ने हमें दिया है। मेरे किताबचे "मुसलमानों पर क़ुरान मजीद के हुक़ूक़" में यह हदीस मौजूद है जिसमें हुज़ूर ﷺ से यह अल्फ़ाज़ नक़ल हुए हैं:

يَا اَهْلَ الْقُرْآنِ لَا تَتَوَسَّدُوا الْقُرْآنَ، وَاتْلُوْهُ حَقَّ تِلَاوَتِهٖ مِنْ اٰنَاءِ اللَّيْلِ وَالنَّهَارِ، وَاَفْشُوْهُ وَتَغَنَّوْهُ وَتَدَبَّرُوْا مَا فِيْهِ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ

"ऐ अहले क़ुरान, क़ुरान को अपना तकिया ना बना लेना, बल्कि इसे पढ़ा करो रात के अवक़ात में भी और दिन के अवक़ात में भी, जैसा कि इसके पढ़ने का हक़ है, और इसे आम करो और ख़ुश अलहानी से पढ़ो और इसमें तदब्बुर करो ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

وَلَيَزِيْدَنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ مَّآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ طُغْيَانًا وَّ كُفْرًا ۚ

"लेकिन (ऐ नबी ﷺ) जो कुछ आप ﷺ पर नाज़िल किया गया है आप ﷺ के रब की तरफ़ से यह उनके अक्सर लोगों की सरकशी और कुफ़्र में यक़ीनन इज़ाफ़ा करेगा।"

उनकी सरकशी और तुग्यानी में और इज़ाफ़ा होगा, उनकी मुखालफ़त और बढ़ती चली जायेगी, हसद की आग में वह मज़ीद जलते चले जाएँगे।

فَلَا تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ۝۶۸

"तो आप ﷺ उन काफ़िरों के बारे में अफ़सोस ना करें।"

नबी चूँकि अपनी उम्मत के हक़ में निहायत रहीम व शफ़ीक़ होता है लिहाज़ा वह लोगों पर अज़ाब को पसंद नहीं करता और क़ौम पर अज़ाब के तसव्वुर से उसे सदमा होता है। फिर ख़ुसूसन जब वह अपनी बिरादरी भी हो, जैसा कि बनी इस्माइल अलै० थे, तो यह रन्ज व सदमा दो चंद हो जाता है। चुनाँचे जब उनके बारे में सूरह युनुस और सूरह हूद में अज़ाब की ख़बरें आ रही थीं तो आप ﷺ बहुत फ़िक्रमन्द और ग़मगीन हुए और आप ﷺ के बालों में एकदम सफ़ेदी आ गयी। इस पर हज़रत अबु बक्र सिद्दीक़ रज़ि० ने पूछा, हुज़ूर ﷺ क्या हुआ? आप ﷺ पर बुढ़ापा तारी हो गया? तो आप ﷺ ने फ़रमाया: ((شَيَّبَتْنِيْ هُوْدٌ وَ اَخَوَاتُهَا)) "मुझे सूरह हूद और उसकी बहनों (हम मज़मून सूरतों) ने बूढ़ा कर दिया है।" क्योंकि इन सूरतों का अंदाज़ ऐसा है कि जैसे अब मोहलत ख़त्म हुई चाहती है और अज़ाब का धारा फूटने ही वाला है।

आयत 69

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَادُوْا وَالصّٰبِـُٔوْنَ وَالنَّصٰرٰى

"बेशक वह लोग जो ईमान लाये, और वह लोग जो यहूदी, साबी और नसारा (ईसाई) हुए"

इस आयत में तक़रीबन वही मज़मून है जो इससे पहले सूरतुल बक़रह के आठवें रुकूअ (आयत 62) में आ चुका है, जिससे बाज़ लोगों को धोखा होता है कि शायद निजात के लिये ईमान बिल रिसालत की ज़रूरत नहीं है, हालाँकि सूरतुन्निसा (आयत 150, 151 और 152) में अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के माबैन तफ़रीक़ करने वालों के लिये बहुत वाज़ेह अंदाज़ में फ़रमाया गया है: {اُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ حَقًّا ۚ} "वही लोग तो पक्के काफ़िर हैं।" दूसरी बात यहाँ ज़हन में यह रखिये कि इन तमाम सूरतों में मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर ईमान लाने की दावत क़दम-क़दम पर है, बार-बार है, लिहाज़ा इससे इस्तगना (स्वतंत्रता) का कोई जवाज़ (कारण) रहता ही

नहीं, सिवाय इसके कि किसी की नीयत में फ़साद हो और दिल में कजी पैदा हो चुकी हो।

مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝

"(अपने-अपने ज़माने में जिस क़ौम और जिस गिरोह से) जो कोई ईमान लाया अल्लाह पर और यौमे आख़िरत पर और उसने अच्छे अमल किये तो उन पर ना कोई खौफ़ होगा और ना वह ग़म से दो-चार होंगे।"

यहाँ वह तमाम लोग मुराद हैं जो अपने-अपने दौर में अल्लाह और आख़िरत पर ईमान व यक़ीन रखते थे और अपने वक़्त के नबी और गुज़िश्ता अम्बिया पर ईमान रखते थे। जैसे हज़रत मसीह अलै० से माक़ब्ल ज़माने में यहूदी थे, जो किताबुल्लाह तौरात पर यक़ीन रखते थे, हज़रत मूसा अलै० को मानते थे, दूसरे नबियों को मानते थे और नेक अमल करते थे। लेकिन अमल के मामले में असल चीज़ और असल बुनियाद अल्लाह की रज़ाजोई और आख़िरत की जज़ा तलबी है, जिससे कोई अमल, अमले सालेह बनता है।

आयत 70

لَقَدْ اَخَذْنَا مِيْثَاقَ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ وَاَرْسَلْنَآ اِلَيْهِمْ رُسُلًا ۭ

"हमने बनी इसराइल से अहद लिया और उनकी तरफ़ बहुत से रसूल भेजे।"

यहाँ बहुत से रसूल भेजने से मुराद है बहुत से अम्बिया भेजे। जैसा कि मैं पहले अर्ज़ कर चुका हूँ, क़ुरान मजीद में रसूल का लफ्ज़ नबी की जगह इस्तेमाल हुआ है, अलबत्ता जहाँ तक लफ्ज़ रसूल के इस्तलाही मफ़हूम का ताल्लुक़ है तो हज़रत मूसा अलै० के बाद बनी इसराइल में रसूल सिर्फ़ एक आये हैं यानि हज़रत ईसा अलै०, बाक़ी सब नबी थे।

كُلَّمَا جَآءَهُمْ رَسُوْلٌۢ بِمَا لَا تَهْوٰٓى اَنْفُسُهُمْ ۙ

"(लेकिन) जब भी कभी उनके पास कोई रसूल लेकर आया वह चीज़ जो उनकी ख्वाहिशाते नफ्स के ख़िलाफ़ थी"

فَرِيْقًا كَذَّبُوْا وَفَرِيْقًا يَّقْتُلُوْنَ ۝

"तो एक गिरोह को उन्होंने झुठलाया और एक गिरोह को क़त्ल करते रहे।"

आयत 71

وَحَسِبُوْٓا اَلَّا تَكُوْنَ فِتْنَةٌ

"और उन्होंने समझा कि उन पर कोई पकड़ नहीं आयेगी"

कोई अक़ूबत नहीं होगी, हम पर कोई सरज़निश नहीं होगी।

فَعَمُوْا وَصَمُّوْا

"तो वह बहरे भी हो गये, अंधे भी हो गये"

ثُمَّ تَابَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ

"फिर अल्लाह ने उन्हें माफ़ कर दिया"

अल्लाह तआला ने भी उन्हें फ़ौरन नहीं पकड़ा। उन्हें तौबा की मोहलत दी, मौक़ा दिया।

ثُمَّ عَمُوْا وَصَمُّوْا كَثِيْرٌ مِّنْهُمْ ۭ

"(नतीजा यह हुआ कि) फिर उनमें से अक्सर लोग और ज़्यादा अंधे और बहरे हो गये।"

बजाये अल्लाह के दामने रहमत में आने के अपनी गुमराही में और बढ़ते चले गये।

وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِمَا يَعْمَلُوْنَ۝۷۱

"और जो कुछ वह कर रहे हैं अल्लाह उसे देख रहा है।"

आयत 72

لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ ۭ

"यक़ीनन कुफ़्र किया उन लोगों ने जिन्होंने कहा कि अल्लाह मसीह इब्ने मरयम ही है।"

यह वही बात है जो इससे पहले इसी सूरत की आयत 17 में आ चुकी है, यानि अल्लाह ही ने मसीह अलै० की शख्सियत का लिबादा ओढ़ लिया है।

وَقَالَ الْمَسِيْحُ يٰبَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ اعْبُدُوا اللّٰهَ رَبِّيْ وَرَبَّكُمْ ۭ

"जबकि मसीह अलै० ने तो कहा था कि ऐ बनी इसराइल, बन्दगी और परस्तिश करो अल्लाह की जो मेरा भी रब है और तुम्हारा भी रब है।"

اِنَّهٗ مَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدْ حَرَّمَ اللّٰهُ عَلَيْهِ الْجَنَّةَ

"यक़ीनन जो भी अल्लाह के साथ शिर्क करेगा तो अल्लाह ने उस पर जन्नत को हराम कर दिया है"

وَمَاْوٰىهُ النَّارُ ۭ وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ اَنْصَارٍ ۝۷۲

"और उसका ठिकाना आग है, और ऐसे ज़ालिमों के लिये कोई मददगार नहीं होगा।"

अब ईसाईयों के शिर्क की एक दूसरी शक्ल का ज़िक्र हो रहा है। उनका एक अक़ीदा तो God Incarnate का था। यह उनमें से एक फ़िरक़े Jacobites का अक़ीदा था कि खुद अल्लाह तआला ही ने ईसा अलै० की शक्ल में इंसानी रूप धार लिया है। ऊपर इसी अक़ीदे का ज़िक्र हुआ है, लेकिन ईसाईयों के यहाँ एक अक़ीदा "तसलीस" का भी है, और इस अक़ीदे की भी उनके यहाँ दो शक्लें हैं। इब्तदा में जो तसलीस थी उसमें अल्लाह, हज़रत मरयम और हज़रत मसीह शामिल थे। यानि "God the Father, God the Mother and God the Son"। दरअसल यह तसलीस मिस्र में फ़राअना के ज़माने से चली आ रही थी। इसी के अन्दर उन्होंने ईसाईयत को ढाल दिया, ताकि मिस्र के लोग आसानी से ईसाईयत क़ुबूल कर लें। इसके बाद हज़रत मरयम को इस तसलीस में से निकाल दिया गया और Holy Ghost या Holy Spirit (रुहुल क़ुदुस) को उनकी जगह शामिल कर लिया गया और इस तरह "God the Father, God the Son and God the Holy Ghost" पर मुश्तमिल तसलीस वजूद में आयी।

आयत 73

لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ ثَالِثُ ثَلٰثَةٍ ۘ

"यक़ीनन कुफ़्र किया उन लोगों ने जिन्होंने कहा कि अल्लाह तीन में का तीसरा है।"

وَمَا مِنْ اِلٰهٍ اِلَّآ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ ۭ

"जबकि हक़ीक़तन नहीं है कोई इलाह सिवाय एक ही इलाह के।"

وَاِنْ لَّمْ يَنْتَهُوْا عَمَّا يَقُوْلُوْنَ

"और अगर यह बाज़ ना आये उससे जो कुछ यह कह रहे हैं"

لَيَمَسَّنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝۷۳

"तो इनमें से जो काफ़िर हैं उन पर बहुत दर्दनाक अज़ाब आकर रहेगा।"

आयत 74

"तो क्या यह लोग अल्लाह की जनाब में तौबा और उससे इस्तग़फ़ार नहीं करते?" اَفَلَا يَتُوْبُوْنَ اِلَى اللّٰهِ وَيَسْتَغْفِرُوْنَهٗ

"और अल्लाह तो ग़फ़ूर और रहीम है।" وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

आयत 75

"मसीह इब्ने मरयम और कुछ नहीं सिवाय इसके कि वह एक रसूल थे।" مَا الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ اِلَّا رَسُوْلٌ

"उनसे पहले भी बहुत से रसूल गुज़र चुके थे।" قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ

यह बिल्कुल वही अल्फ़ाज़ हैं जो सूरह आले इमरान (आयत 144) में मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के बारे में आये हैं: { وَمَا مُحَمَّدٌ اِلَّا رَسُوْلٌ ۚ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ ۭ} "मुहम्मद (ﷺ) इसके सिवा क्या हैं कि अल्लाह के रसूल हैं, और आप ﷺ से पहले बहुत से रसूल गुज़र चुके हैं।" तो इसी तरह फ़रमाया कि हज़रत ईसा अलै० की हैसियत अल्लाह के एक रसूल की है, जिस तरह उनसे पहले बहुत से रसूल गुज़र चुके हैं।

"और उनकी वालिदा सिद्दीक़ा थीं।" وَاُمُّهٗ صِدِّيْقَةٌ

क़ब्ल अज़ हम सूरतुन्निसा (आयत 69) में पढ़ चुके हैं कि नबियों के बाद सबसे ऊँचा दर्जा सिद्दीक़ीन का है। ख्वातीन को अगरचे नबुवत तो नहीं मिली है लेकिन अम्बिया के बाद जो दूसरा दर्जा है उसमें बहुत चोटी की हैसियतें उन्हें मिली हैं। हमारी उम्मत की सिद्दीक़तुल कुबरा यानि सबसे बड़ी सिद्दीक़ा हज़रत ख़दीजा रज़ि० हैं और सिद्दीक़े अकबर की हैसियत इस उम्मत में हज़रत अबु बक्र रज़ि० को मिली है। हज़रत आयशा रज़ि० भी सिद्दीक़ा हैं। इसी तरह हज़रत मरयम अलै० भी सिद्दीक़ा थीं।

"वह दोनों खाना खाते थे।" كَانَا يَاْكُلٰنِ الطَّعَامَ

दोनों इन्सान थे, बशर थे और सारे बशरी तक़ाज़े उनके साथ थे।

"देखो, किस तरह हम उनके लिये अपनी आयात वाज़ेह करते हैं, फिर देखो कि वह कहाँ से उल्टा दिये जाते हैं।" اُنْظُرْ كَيْفَ نُبَيِّنُ لَهُمُ الْاٰيٰتِ ثُمَّ انْظُرْ اَنّٰى يُؤْفَكُوْنَ ۝

आयत 76

"आप ﷺ कहिये क्या तुम पूजते हो अल्लाह के सिवा उन्हें जो तुम्हारे लिये ना किसी नुक़सान का इख़्तियार रखते हैं और ना नफ़े का?" قُلْ اَتَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا لَا يَمْلِكُ لَكُمْ ضَرًّا وَّلَا نَفْعًا

"जबकि अल्लाह ही सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है।" وَاللّٰهُ هُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝

आयत 77

"कह दीजिये, ऐ अहले किताब, अपने दीन में नाहक़ गुलू ना करो" قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لَا تَغْلُوْا فِيْ دِيْنِكُمْ غَيْرَ الْحَقِّ

यह तुमने हज़रत ईसा अलै० को मोहब्बत और अक़ीदत की वजह से जो कुछ बना दिया है, वह सरासर मुबालगा है। हुज़ूर ﷺ की शान में भी

मुबालगा आराई अगर लोग करते हैं तो मोहब्बत की वजह से करते हैं, इश्क़े रसूल ﷺ के नाम पर करते हैं, अक़ीदत के गुलू की वजह से करते हैं। तो गुलू (मुबालगा) दरहक़ीक़त इन्सान को गुमराही की तरफ़ ले जाता है। चुनाँचे इससे मना किया जा रहा है।

"और मत पैरवी करो उन लोगों की बिदआत की जो तुमसे पहले (ख़ुद भी) गुमराह हुए"	وَلَا تَتَّبِعُوْٓا اَهْوَاۗءَ قَوْمٍ قَدْ ضَلُّوْا مِنْ قَبْلُ

जैसा कि मैंने अर्ज़ किया है, यह तसलीस मिस्र में ज़माना-ए-क़दीम से मौजूद थी, उसी को उन्होंने इख़्तियार किया।

"और उन्होंने बहुत से दूसरे लोगों को भी गुमराह किया और सीधे रास्ते से भटक गये।"	وَاَضَلُّوْا كَثِيْرًا وَّضَلُّوْا عَنْ سَوَاۗءِ السَّبِيْلِ ۝

आयात 78 से 86 तक

لُعِنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْۢ بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ عَلٰي لِسَانِ دَاوٗدَ وَعِيْسَى ابْنِ مَرْيَمَ ۭ ذٰلِكَ
بِمَا عَصَوْا وَّكَانُوْا يَعْتَدُوْنَ ۝ كَانُوْا لَا يَتَنَاهَوْنَ عَنْ مُّنْكَرٍ فَعَلُوْهُ ۭ لَبِئْسَ مَا
كَانُوْا يَفْعَلُوْنَ ۝ تَرٰى كَثِيْرًا مِّنْهُمْ يَتَوَلَّوْنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۭ لَبِئْسَ مَا قَدَّمَتْ
لَهُمْ اَنْفُسُهُمْ اَنْ سَخِطَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ وَفِي الْعَذَابِ هُمْ خٰلِدُوْنَ ۝ وَلَوْ كَانُوْا
يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالنَّبِيِّ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِ مَا اتَّخَذُوْهُمْ اَوْلِيَاۗءَ وَلٰكِنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ
فٰسِقُوْنَ ۝ لَتَجِدَنَّ اَشَدَّ النَّاسِ عَدَاوَةً لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوا الْيَهُوْدَ وَالَّذِيْنَ اَشْرَكُوْا ۚ
وَلَتَجِدَنَّ اَقْرَبَهُمْ مَّوَدَّةً لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوا الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّا نَصٰرٰى ۭ ذٰلِكَ بِاَنَّ مِنْهُمْ
قِسِّيْسِيْنَ وَرُهْبَانًا وَّاَنَّهُمْ لَا يَسْتَكْبِرُوْنَ ۝ وَاِذَا سَمِعُوْا مَآ اُنْزِلَ اِلَى الرَّسُوْلِ
تَرٰٓي اَعْيُنَهُمْ تَفِيْضُ مِنَ الدَّمْعِ مِمَّا عَرَفُوْا مِنَ الْحَقِّ ۚ يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اٰمَنَّا
فَاكْتُبْنَا مَعَ الشّٰهِدِيْنَ ۝ وَمَا لَنَا لَا نُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَمَا جَاۗءَنَا مِنَ الْحَقِّ ۙ وَنَطْمَعُ اَنْ
يُّدْخِلَنَا رَبُّنَا مَعَ الْقَوْمِ الصّٰلِحِيْنَ ۝ فَاَثَابَهُمُ اللّٰهُ بِمَا قَالُوْا جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ
تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۭ وَذٰلِكَ جَزَاۗءُ الْمُحْسِنِيْنَ ۝ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا
بِاٰيٰتِنَآ اُولٰۗىِٕكَ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ۝

आयत 78

"लानत की गयी उन लोगों पर जिन्होंने कुफ़्र किया बनी इसराइल में से, दाऊद अलै० की ज़बान से और ईसा अलै० इब्ने मरयम की ज़बान से भी।"	لُعِنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْۢ بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ عَلٰي لِسَانِ دَاوٗدَ وَعِيْسَى ابْنِ مَرْيَمَ ۭ

बनी इसराइल का जो किरदार रहा है उस पर उनके अम्बिया उनको मुसलसल लअन-तअन करते रहे हैं। Old Testament में हज़रत दाऊद अलै० के हवाले से इसकी बहुत सी मिसालें मौजूद हैं। New Testament (गोस्पल्ज़) में हज़रत मसीह अलै० के तनक़ीदी फ़रमूदात (आलोचनात्मक कथन) बार-बार मिलते हैं, जिनमें अक्सर उनके उलमा, अहबार और सूफ़िया मुख़ातिब हैं कि तुम साँपों के संपोलिये हो। तुम्हारा हाल उन क़ब्रों जैसा है जिनके ऊपर तो सफ़ेदी फिरी हुई है, मगर अन्दर गली-सड़ी हड्डियों के सिवा कुछ भी नहीं है। तुमने अपने ऊपर सिर्फ़ मज़हबी लिबादे ओढ़े हुए हैं, लेकिन तुम्हारे अन्दर ख्यानत भरी हुई है। तुम मच्छर छानते हो और समूचे ऊँट निगल जाते हो, यानि छोटी-छोटी चीज़ों पर तो ज़ोरदार बहसें होती हैं जबकि बड़े-बड़े गुनाह खुले बन्दों करते हो। यह तो यहूदी क़ौम और उनके उलमा के किरदार की झलक है उनके अपने नबी की ज़बान से, मगर दूसरी तरफ़ यही नक़्शा बैन ही आज हमें अपने उलमा-ए-सू में भी नज़र आता है।

"यह इसलिये हुआ कि उन्होंने नाफ़रमानी की, और वह हुदूद से तजावुज़ कर जाते थे।"

ذٰلِكَ بِمَا عَصَوْا وَّكَانُوْا يَعْتَدُوْنَ ۝٧٨

आयत 79

"यह लोग एक-दूसरे को नहीं रोकते थे उन मुन्किरात से जो वह करते थे।"

كَانُوْا لَا يَتَنَاهَوْنَ عَنْ مُّنْكَرٍ فَعَلُوْهُ

जिस मआशरे से नही अनिल मुन्कर (बुराई से रोकना) ख़त्म हो जायेगा, वह पूरा मआशरा संडास बन जायेगा। यह तो गोया इंतेज़ामे सफ़ाई है। हर शख्स का फ़र्ज़ है कि वह अपने इर्द-गिर्द निगाह रखे, एक-दूसरे को रोकता रहे कि यह काम ग़लत है, यह मत करो! जिस मआशरे से यह तनक़ीद और अहतसाब ख़त्म हो जायेगा, उसके अन्दर लाज़िमन ख़राबी पैदा हो जायेगी।

"बहुत ही बुरा तर्ज़े अमल था जो उन्होंने इख़्तियार किया।"

لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَفْعَلُوْنَ ۝٧٩

आयत 80

"तुम उनमें से अक्सर को देखोगे कि वह काफ़िरों से दोस्ती रखते हैं।"

تَرٰى كَثِيْرًا مِّنْهُمْ يَتَوَلَّوْنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا

ख़ुद काफ़िरों के हिमायती बनते हैं और अपने लिये उनकी हिमायत तलाश करते हैं।

"बहुत ही बुरी कमाई है जो उन्होंने अपने लिये आगे भेजी है"

لَبِئْسَ مَا قَدَّمَتْ لَهُمْ اَنْفُسُهُمْ

यह उनके जो करतूत हैं वह सब आगे अल्लाह के यहाँ जमा हो रहे हैं और उनका वबाल उन पर आयेगा।

"यह कि अल्लाह तआला का ग़ज़ब होगा उन पर"

اَنْ سَخِطَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ

"और वह अज़ाब में हमेशा-हमेश रहेंगे।"

وَفِي الْعَذَابِ هُمْ خٰلِدُوْنَ ۝٨٠

आयत 81

"और अगर यह ईमान लाते अल्लाह पर और नबी ﷺ पर और उस पर जो नबी ﷺ पर नाज़िल किया गया (यानि क़ुरान हकीम)"

وَلَوْ كَانُوْا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالنَّبِيِّ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِ

"तो फिर इन्होंने इन (काफ़िरों) को अपना वली ना बनाया होता"

مَا اتَّخَذُوْهُمْ اَوْلِيَآءَ

"लेकिन इनकी अक्सरियत नाफ़रमानों पर मुश्तमिल है।

وَلٰكِنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ فٰسِقُوْنَ ۝٨١

आयत 82

"तुम लाज़िमन पाओगे अहले ईमान के हक़ में शदीद-तरीन दुश्मन यहूद को और उनको जो मुशरिक हैं।"

لَتَجِدَنَّ اَشَدَّ النَّاسِ عَدَاوَةً لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوا الْيَهُوْدَ وَالَّذِيْنَ اَشْرَكُوْا

यह बहुत अहम बात है। मक्का के मुशरिकीन भी मुसलमानों के दुश्मन थे, लेकिन उनकी दुश्मनी कमसे कम खुली दुश्मनी थी, उनका दुश्मन होना बिल्कुल ज़ाहिर व बाहर था, वह सामने से हमला करते थे। लेकिन मुसलमानों से बदतरीन दुश्मनी यहूद की थी, वह आस्तीन के साँप थे और साज़िशी अंदाज़ में मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाने में मुशरिकीने मक्का से

कहीं आगे थे। आज भी यहूद और हिन्दू मुसलमानों की दुश्मनी में सबसे आगे हैं, क्योंकि इस क़िस्म (बुत परस्ती) का शिर्क तो अब सिर्फ़ हिन्दुस्तान में रह गया है, और कहीं नहीं रहा। हिन्दुस्तान के भी अब यह सिर्फ़ निचले तबक़े में है जबकि आम तौर पर ऊपर के तबक़े में नहीं है। लेकिन बहरहाल अब भी मुसलमानों के ख़िलाफ़ यहूद और हिन्दू का गठजोड़ है।

وَلَتَجِدَنَّ اَقْرَبَهُمْ مَّوَدَّةً لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوا الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّا نَصٰرٰى ؕ

"और तुम लाज़िमन पाओगे मवद्दत (दोस्ती) के ऐतबार से क़रीब-तरीन अहले ईमान के हक़ में उन लोगों को जिन्होंने कहा कि हम नसारा हैं।"

यह तारीखी हक़ीक़त है और सीरते मुहम्मद ﷺ से साबित है कि जिस तरह की शदीद दुश्मनी उस वक़्त यहूद ने आप ﷺ से की वैसी नसारा ने नहीं की। हज़रत नजाशी रहि० (शाहे हबशा) ने उस वक़्त के मुस्लमान मुहाजिरों को पनाह दी, मक़ोक़स (शाहे मिस्र) ने भी हुज़ूर ﷺ की ख़िदमत में हदिये भेजे। हरक़ुल ने भी हुज़ूर ﷺ के नामाये मुबारक का अहतराम किया। वह चाहता भी था कि अगर मेरी पूरी क़ौम मान ले तो हम इस्लाम क़ुबूल कर लें। नजरान के ईसाईयों का एक वफ़द आप ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर हुआ, जिसका ज़िक्र सूरह आले इमरान (आयत 61) में हम पढ़ चुके हैं। वह लोग अगरचे मुस्लमान तो नहीं हुए मगर उनका रवैय्या इन्तहाई मोहतात रहा। बहरहाल यह हक़ीक़त है कि हुज़ूर ﷺ के ज़माने में मुसलमानों के ख़िलाफ़ ईसाईयों की मुखालफ़त में वह शिद्दत ना थी जो यहूदियों की मुखालफ़त में थी।

ذٰلِكَ بِاَنَّ مِنْهُمْ قِسِّيْسِيْنَ وَرُهْبَانًا وَّاَنَّهُمْ لَا يَسْتَكْبِرُوْنَ ۝٨٢

"यह इसलिये कि उन (ईसाईयों) में आलिम भी मौजूद हैं और दरवेश भी और (इसलिये भी कि) वह तकब्बुर नहीं करते।"

यानि ईसाईयों में उस वक़्त तक उलमाये हक़ भी मौजूद थे और दरवेश राहिब भी जो वाक़ई अल्लाह वाले थे। बहीरा राहिब ईसाई था जिसने हुज़ूर ﷺ को बचपन में पहचाना था। इसी तरह वरक़ा बिन नौफ़ल ने हुज़ूर ﷺ किस सबसे पहले तस्दीक़ की थी और बताया था कि ऐ मुहम्मद (ﷺ) आप पर वही नामूस नाज़िल हुआ है जो इससे पहले हज़रत मूसा और हज़रत ईसा (अलै०) पर नाज़िल हुआ था। वरक़ा बिन नौफ़ल थे तो अरब के रहने वाले, लेकिन वह हक़ की तलाश में शाम गये और ईसाईयत इख़्तियार की। वह इब्रानी ज़बान में तौरात लिखा करते थे। यह उस दौर के चंद ईसाई उलमा और राहिबों की मिसालें हैं। लेकिन वह "قِسِّيْسِين" और "رُهْبَان" अब आपको ईसाईयों में नहीं मिलेंगे, वह दौर ख़त्म हो चुका है। यह उस वक़्त की बात है जब क़ुरान नाज़िल हो रहा था। इसके बाद जो सूरते हाल बदली है और सलेबी जंगों के अन्दर ईसाईयत ने जो वहशत और बरबरियत दिखाई है, और ईसाई उलमा और मज़हबी पेशवाओं ने जिस तरह मुसलमानों के खून से होली खेली है और अपनी क़ौम से इस सिलसिले में जो कारनामे अंजाम दिलवाये हैं वह तारीख के चेहरे पर बहुत ही बदनुमा दाग़ है।

आयत 83

وَاِذَا سَمِعُوْا مَآ اُنْزِلَ اِلَى الرَّسُوْلِ

"और जब इन्होंने सुनी वह चीज़ जो कि रसूल (ﷺ) पर नाज़िल की गयी थी"

تَرٰٓى اَعْيُنَهُمْ تَفِيْضُ مِنَ الدَّمْعِ مِمَّا عَرَفُوْا مِنَ الْحَقِّ ۚ

"तो तुम देखते हो कि हक़ की जो पहचान उन्हें हासिल हुई उसके ज़ेरे असर उनकी आँखों से आँसू रवाँ हो गये।"

यह एक वाक़िये की तरफ़ इशारा है। मक्की दौर में जब सहाबा रज़ि० हिजरत करके हबशा गये थे तो उनके ज़रिये से वहाँ कुछ लोगों ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया था। फिर जब मदीना मुनव्वरा में इस्लाम का गलबा हो गया और अरब में अमन क़ायम हो गया तो उनका एक वफ़द मदीना आया जो सत्तर (70) अफ़राद पर मुश्तमिल था और उसमें कुछ नव मुस्लिम भी शामिल थे। आयत ज़ेरे नज़र में उस वफ़द के अरकान का ज़िक्र है कि जब

उन्होंने क़ुरान सुना तो हक़ को पहचान लेने की वजह से उनकी आँखों से आँसुओं की लड़ियाँ जारी हो गयीं।

يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اٰمَنَّا فَاكْتُبْنَا مَعَ الشّٰهِدِيْنَ ۝٨٣

"(और) वह कह रहे हैं, ऐ हमारे रब हम ईमान ले आये, पस तू हमें लिख ले गवाही देने वालों में से।"

आयत 84

وَمَا لَنَا لَا نُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَمَا جَآءَنَا مِنَ الْحَقِّ ۙ

"और हमें क्या हुआ है कि हम ईमान ना लायें अल्लाह पर और उस हक़ पर जो हम तक पहुँच गया है"

وَنَطْمَعُ اَنْ يُّدْخِلَنَا رَبُّنَا مَعَ الْقَوْمِ الصّٰلِحِيْنَ ۝٨٤

"और हमें तो बड़ी ख्वाहिश है कि दाख़िल करे हमें हमारा रब नेकोकार लोगों के साथ।"

आयत 85

فَاَثَابَهُمُ اللّٰهُ بِمَا قَالُوْا جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۭ

"तो अल्लाह ने उनके इस क़ौल के बदले उन्हें वह बाग़ात अता किये जिनके दामन में नदियाँ बहती हैं, जिनमें वह हमेशा रहेंगे।"

وَذٰلِكَ جَزَآءُ الْمُحْسِنِيْنَ ۝٨٥

"और यही बदला है अहसान की रविश इख़्तियार करने वालों का।"

जो ख़ुश किस्मत नफ़ूस इस्लाम क़ुबूल करें, और इस्लाम के बाद ईमान और फिर ईमान से आगे बढ़ कर अहसान के दर्जे तक पहुँच जायें उनका बदला यही है।

आयत 86

وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَآ اُولٰۗىِٕكَ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ۝٨٦

"रहे वह लोग जिन्होंने इन्कार किया और झुठला दिया हमारी आयात को, तो वही लोग हैं जो जहन्नमी हैं।"

आयात 87 से 93 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحَرِّمُوْا طَيِّبٰتِ مَآ اَحَلَّ اللّٰهُ لَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ ۝٨٧ وَكُلُوْا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ حَلٰلًا طَيِّبًا ۠ وَّاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِيْٓ اَنْتُمْ بِهٖ مُؤْمِنُوْنَ ۝٨٨ لَا يُؤَاخِذُكُمُ اللّٰهُ بِاللَّغْوِ فِيْٓ اَيْمَانِكُمْ وَلٰكِنْ يُّؤَاخِذُكُمْ بِمَا عَقَّدْتُّمُ الْاَيْمَانَ ۚ فَكَفَّارَتُهٗٓ اِطْعَامُ عَشَرَةِ مَسٰكِيْنَ مِنْ اَوْسَطِ مَا تُطْعِمُوْنَ اَهْلِيْكُمْ اَوْ كِسْوَتُهُمْ اَوْ تَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ ۭ فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلٰثَةِ اَيَّامٍ ۭ ذٰلِكَ كَفَّارَةُ اَيْمَانِكُمْ اِذَا حَلَفْتُمْ ۭ وَاحْفَظُوْٓا اَيْمَانَكُمْ ۭ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝٨٩ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْخَمْرُ وَالْمَيْسِرُ وَالْاَنْصَابُ وَالْاَزْلَامُ رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ فَاجْتَنِبُوْهُ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝٩٠ اِنَّمَا يُرِيْدُ الشَّيْطٰنُ اَنْ يُّوْقِعَ بَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَاۗءَ فِي الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ وَيَصُدَّكُمْ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَعَنِ الصَّلٰوةِ ۚ فَهَلْ اَنْتُمْ مُّنْتَهُوْنَ ۝٩١ وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَاحْذَرُوْا ۚ فَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَا عَلٰي رَسُوْلِنَا الْبَلٰغُ الْمُبِيْنُ ۝٩٢ لَيْسَ عَلَي الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا

الصّٰلِحٰتِ جُنَاحٌ فِيۡمَا طَعِمُوۡۤا اِذَا مَا اتَّقَوۡا وَّاٰمَنُوۡا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ ثُمَّ اتَّقَوۡا وَّاٰمَنُوۡا ثُمَّ اتَّقَوۡا وَّاَحۡسَنُوۡا ؕ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الۡمُحۡسِنِيۡنَ ﴿۹۳﴾

खाने-पीने की चीज़ों में हिल्लत व हुरमत और तहलील व तहरीम इल्हामी शरीअतों का एक अहम मौज़ू रहा है। क़ुरान हकीम में भी बार-बार इन मसाइल पर बहस की गयी है और यह मौज़ू सूरतुल बक़रह से मुसलसल चल रहा है। अरबों के यहाँ नस्ल दर नस्ल राइज मुशरिकाना अवाहम की वजह से बहुत सी चीज़ों के बारे में हिल्लत व हुरमत के ग़लत तसव्वुरात ज़हनों में पुख्ता हो चुके थे। इस क़िस्म के ख्यालात ज़हनों, दिलों और मिज़ाजों से निकलने में वक़्त लगता है। इसलिये बार-बार इन मसाइल की तरफ़ तवज्जो दिलाई जा रही है।

आयत 87

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا لَا تُحَرِّمُوۡا طَيِّبٰتِ مَاۤ اَحَلَّ اللّٰهُ لَكُمۡ

"ऐ ईमान वालो, ना हराम ठहरा लो उन चीज़ों को जिनको अल्लाह ने तुम्हारे लिये हलाल किया है"

وَلَا تَعۡتَدُوۡا ؕ

"और हद से तजावुज़ ना करो।"

बाज़ अवक़ात ऐसा भी होता है कि कुछ लोग तक़वे के जोश में और बहुत ज़्यादा नेकी कमाने के जज़्बे में भी कई हलाल चीज़ों को अपने ऊपर हराम कर बैठते हैं, इसलिये फ़रमाया गया कि हद से तजावुज़ ना करो।

اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الۡمُعۡتَدِيۡنَ ﴿۸۷﴾

"यक़ीनन अल्लाह हद से तजावुज़ करने वालों को पसंद नहीं करता।"

आयत 88

وَكُلُوۡا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ حَلٰلًا طَيِّبًا ۪

"और खाओ उन हलाल और पाकीज़ा चीज़ों में से जो अल्लाह ने तुम्हें दी हैं"

यानि वह चीज़ें जो क़ानूनी तौर पर हलाल हों और ज़ाहिरी तौर पर भी साफ़-सुथरी हों।

وَّاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِىۡۤ اَنۡتُمۡ بِهٖ مُؤۡمِنُوۡنَ ﴿۸۸﴾

"और उस अल्लाह का तक़वा इख़्तियार किये रखो जिस पर तुम्हारा ईमान है।"

आयत 89

لَا يُؤَاخِذُكُمُ اللّٰهُ بِاللَّغۡوِ فِىۡۤ اَيۡمَانِكُمۡ

"अल्लाह तआला मुआख़ज़ा नहीं करेगा तुमसे तुम्हारी उन क़समों में जो लग्व होती हैं"

क़समों के सिलसिले में सूरतुल बक़रह (आयत 225) में हिदायात गुज़र चुकी हैं, अब यहाँ इस ज़िमन में आखरी हुक्म आ रहा है। यानि ऐसी क़समें जो बगैर किसी इरादे के खाई जाती हैं, उन पर कोई गिरफ़्त नहीं है। जैसे वल्लाह, बिल्लाह वगैरह का तकिया कलाम के तौर पर इस्तेमाल अरबों की ख़ास आदत थी और आज भी है। ज़ाहिर है इसको सुन कर कोई भी यह नहीं समझता कि यह शख्स बाक़ायदा क़सम खा रहा है। तो ऐसी सूरत में कोई मुआख़ज़ा नहीं है।

وَلٰكِنۡ يُّؤَاخِذُكُمۡ بِمَا عَقَّدۡتُّمُ الۡاَيۡمَانَ ۚ

"लेकिन वह (ज़रूर) मुआख़ज़ा करेगा तुमसे उन क़समों पर जिनको तुमने पुख्ता किया है।"

عقد عَقَّدۡتُّمُ से बाबे तफ़ईल है। यानि पूरे अहतमाम के साथ एक बात तय की गयी और उस पर किसी ने क़सम खाई। अब अगर ऐसी क़सम टूट जाये या उसको तोड़ना मक़सूद हो तो उसका कफ्फ़ारा अदा करना होगा।

"सो उसका कफ़्फ़ारा है खाना खिलाना दस मसाकीन को, औसत दर्जे का खाना जैसा तुम अपने घर वालों को खिलाते हो" — فَكَفَّارَتُهٗٓ اِطْعَامُ عَشَرَةِ مَسٰكِيْنَ مِنْ اَوْسَطِ مَا تُطْعِمُوْنَ اَهْلِيْكُمْ

"या उनको कपड़े पहनाना" — اَوْ كِسْوَتُهُمْ

"या किसी गुलाम को आज़ाद करना।" — اَوْ تَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ

"फिर जो कोई इसकी इस्तताअत ना रखता हो वह तीन दिन के रोज़े रखे।" — فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلٰثَةِ اَيَّامٍ

यानि अगर किसी के पास इन तीनों में से कोई सूरत भी मौजूद ना हो, कोई शख्स खुद फ़क़ीर और मुफ़लिस हो, उसके पास कुछ ना हो तो वह तीन दिन के रोज़े रख ले।

"यह कफ़्फ़ारा है तुम्हारी क़समों का जब तुम क़सम खा (कर तोड़) बैठो।" — ذٰلِكَ كَفَّارَةُ اَيْمَانِكُمْ اِذَا حَلَفْتُمْ

"और अपनी क़समों की हिफ़ाज़त किया करो।" — وَاحْفَظُوْٓا اَيْمَانَكُمْ

यानि जब किसी सही मामले में बिल इरादा क़सम खाई जाये तो उसे पूरा किया जाये, और अगर किसी वजह से क़सम तोड़ने की नौबत आ जाये तो उसे तोड़ने का बाक़ायदा कफ़्फ़ारा दिया जायेगा।

"इस तरह अल्लाह तुम्हारे लिये अपनी आयात को वाज़ेह फ़रमा रहा है ताकि तुम शुक्र करो।" — كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ

अब शराब और जुए के बारे में भी आखरी हुक्म आ रहा है।

आयत 90

"ऐ अहले ईमान, यक़ीनन शराब और जुआ, बुत और पांसे, यह सब गंदे काम हैं शैतान के अमल में से, तो इनसे बच कर रहो ताकि तुम फ़लाह पाओ।" — يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْخَمْرُ وَالْمَيْسِرُ وَالْاَنْصَابُ وَالْاَزْلَامُ رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ فَاجْتَنِبُوْهُ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ

शराब और जुए के बारे में तो पहले भी हुक्म आ चुका है, लेकिन "اَنْصَاب" और "اَزْلَام" का यहाँ इज़ाफ़ा किया गया है। अन्साब से मुराद बुतों के स्थान हैं और अज़्लाम जुए ही की एक क़िस्म थी जिसमें अहले अरब तीरों के ज़रिये पांसे डालते थे, क़ुर्रा अंदाज़ी करते थे। इन तमाम कामों को " رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ" क़रार दे दिया गया।

आयत 91

"शैतान तो यह चाहता है कि तुम्हारे दरमियान दुश्मनी दुश्मनी और बुग़्ज़ पैदा कर दे शराब और जुए के ज़रिये से" — اِنَّمَا يُرِيْدُ الشَّيْطٰنُ اَنْ يُّوْقِعَ بَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَآءَ فِي الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ

यह बहुत अहम बात है, क्योंकि शराब के नशे में इन्सान अपना होश और शऊर खो बैठता है। ऐसी हालत में उसको कुछ ख़बर नहीं रहती कि वह मुँह से क्या बकवास कर रहा है और उसके आज़ा व जवारह (अंगों) से क्या अफ़आल सरज़द हो रहे हैं, लिहाज़ा कुछ नहीं कहा जा सकता कि ऐसी हालत में किसी बात या किसी हरकत से क्या-क्या गुल खिलेंगे, कैसे-कैसे झगड़े और फ़सादात जन्म लेंगे। बाज़ अवक़ात ऐसा भी होता है कि हुकूमती और रियासती सतह के बड़े-बड़े राज़ शराब के नशे में चुरा लिये जाते हैं। तो अल्लाह तआला तुम्हें इन चीज़ों से बचाना चाहता है, जबकि शैतान

चाहता है कि तुम्हारे माबैन अदावत और बुग्ज़ पैदा करे। इसी तरह जुए से भी बुग्ज़ व अदावत की कोंपलें फूटती हैं। मसलन एक आदमी जुए में हार जाता है, फिर पे-दर-पे हारता चला जाता है। एक वक़्त आता है कि वह फट पड़ता है और गुस्से में आग बबूला होकर आपे से बहार हो जाता है। इसलिये कि उसे नज़र आ रहा है कि मेरा जो हरीफ़ मुझसे जीत रहा है वह किसी मेहनत की वजह से नहीं जीत रहा। किसी ने मेहनत और कोशिश से कुछ कमाया हो तो उससे दूसरे को जलन महसूस नहीं होती, लेकिन जुए में बेमेहनत की कमाई होती है जिसे मुखालिफ़ फ़रीक़ बर्दाश्त नहीं कर सकता, और इस तरह इंसानी ताल्लुक़ात में कई मनफ़ी पेचीदगियाँ जन्म लेती हैं।

وَيَصُدَّكُمْ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَعَنِ الصَّلٰوةِ ۚ *"और (शैतान यह भी चाहता है कि) तुम्हें रोके अल्लाह की याद से और नमाज़ से।"*

अल्लाह के ज़िक्र और नमाज़ से रोकने वाला मामला भी शराब का तो बिल्कुल वाज़ेह है, लेकिन जुए में भी यूँ ही होता है कि आदमी एक बार इसमें लग जाये तो फिर वहाँ से निकलना मुश्किल हो जाता है। जैसा कि ताश और शतरंज वगैरह भी ऐसे खेल हैं कि इनमें मशगूल होकर इन्सान ज़िक्र और नमाज़ जैसी चीज़ों से बिल्कुल ग़ाफ़िल हो जाता है।

فَهَلْ اَنْتُمْ مُّنْتَهُوْنَ ﴿٩١﴾ *"तो अब बाज़ आते हो या नहीं?"*

यह अंदाज़ बड़ा सख्त है और इसका एक ख़ास पसमंज़र है। शराब और जुए के बारे में एक वाज़ेह हिदायत क़ब्ल अज़ (सूरतुल बक़रह, आयत:219 में) आ चुकी थी: { فِيْهِمَآ اِثْمٌ كَبِيْرٌ وَّمَنَافِعُ لِلنَّاسِ ۡ وَاِثْمُهُمَآ اَكْبَرُ مِنْ نَّفْعِهِمَا } "इन दोनों के अन्दर बहुत बड़े गुनाह के पहलु हैं, और लोगों के लिये कुछ फ़ायदे भी हैं, अलबत्ता इनका गुनाह का पहलु नफ़े के पहलु से बड़ा है।" तो उसी वक़्त तुम्हें समझ लेना चाहिये था और बाज़ आ जना चाहिये था। उस पहले हुक्म में अल्लाह तआला की मसलहत, मशीयत और शरीअत का रुख तो वाज़ेह हो गया था। फिर अगला क़दम उठाया गया और हुक्म दिया गया: "जब तुम लोग शराब के नशे में हो तो नमाज़ के क़रीब मत जाओ...." (अन्निसा:43)। इससे तो पूरे तौर से वाज़ेह हो जना चाहिये था कि दीन का अहमतरीन सुतून नमाज़ है: ((اَلصَّلٰوةُ عِمَادُ الدِّيْنِ)) और यह शराब नमाज़ से रोक रही है, तो तुम्हें यह छोड़ देनी चाहिये थी। बहरहाल अब आखरी बात अल्लाह तआला की तरफ़ से आ गयी है, तो इसे सुन कर क्या अब भी बाज़ नहीं आओगे?

आयत 92

وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَاحْذَرُوْا ۚ *"और इताअत करो अल्लाह की और इताअत करो रसूल (ﷺ) की और (उनकी नाफ़रमानी से) बचते रहो।"*

فَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَا عَلٰى رَسُوْلِنَا الْبَلٰغُ الْمُبِيْنُ ﴿٩٢﴾ *"फिर अगर तुम पीठ मोड़ लोगे तो जान लो कि हमारे रसूल (ﷺ) पर तो ज़िम्मेदारी है बस साफ़-साफ़ पहुँचा देने की।"*

यह अल्लाह का हुक्म है। अल्लाह का हुक्म पहुँचाना रसूल ﷺ के ज़िम्मे था, तो रसूल ﷺ ने पहुँचा कर अपनी ज़िम्मेदारी अदा कर दी, अब मामला अल्लाह का और तुम्हारा होगा। अल्लाह तुमसे निमट लेगा, तुमसे हिसाब ले लेगा।

अब जो अगली आयत आ रही है यह भी क़ुरान मजीद के फ़लसफ़े और हिकमत के ज़िमन में बहुत बुनियादी आयत है। इसका पसमंज़र यह है कि जब शराब के बारे में इतना सख्त अंदाज़ आया कि शराब और जुआ गंदे शैतानी काम हैं, इनसे बाज़ आते हो या नहीं? तो बहुत से मुसलमानों को तशवीश (चिंता) लाहक़ हो गई कि हम जो इतने अरसे तक शराब पीते रहे तो यह गन्दगी तो हमारी हड्डियों में बैठ गयी होगी। आज साइंस की ज़बान में जैसे कोई शख्स कहे कि मेरे जिस्म का तो कोई एक खला (cell) भी ऐसा नहीं होगा जिसमें शराब के असरात ना पहुँचे हों। तो अब हम कैसे पाक

होंगे? अब किस तरीक़े से यह गन्दगी हमारे जिस्मों से धुलेगी? उनकी यह तशवीश (चिंता) बजा (ठीक) थी। जैसे तहवीले क़िब्ला के वक़्त तशवीश पैदा हो गई थी कि अगर असल क़िब्ला बैतुल्लाह था और हम बैतुल मक़दस की तरफ़ रुख करके नमाज़ें पढ़ते रहे तो वह नमाज़ें तो ज़ाया हो गईं, और नमाज़ ही तो ईमान है। तो इस पर मोमिनीन की तसल्ली के लिये (सूरतुल बक़रह:143 में) फ़रमाया गया था: {وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُضِيْعَ اِيْمَانَكُمْ ۭ} "अल्लाह तुम्हारे ईमान को ज़ाया करने वाला नहीं है।" ऐसे ही यहाँ उनकी दिलजोई के लिये फ़रमाया:

आयत 93

لَيْسَ عَلَى الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ جُنَاحٌ فِيْمَا طَعِمُوْٓا

"उन लोगों पर जो ईमान लाये और नेक अमल किये कोई गुनाह नहीं है उसमें जो वह (पहले) खा-पी चुके"

किसी शय की हुरमत के क़तई हुक्म आने से पहले जो कुछ खाया-पिया गया, उसका कोई गुनाह उन पर नहीं रहेगा। यह कोई हड्डियों में बैठ जाने वाली शय नहीं है, यह तो शरई और अख्लाक़ी क़ानून (Moral Law) का मामला है, तबई क़ानून (Physical Law) का नहीं है। तबई (Physical) तौर पर तो कुछ चीज़ों के असरात वाक़ई दाइमी हो जाते हैं, लेकिन Moral Law का मामला यक्सर मुख्तलिफ़ है। गुनाह तो ओहद पहाड़ के बराबर भी हो तो सच्ची तौबा से बिल्कुल साफ़ हो जाते हैं। अज़रुए हदीस नबवी ﷺ: ((اَلتَّائِبُ مِنَ الذَّنْبِ كَمَنْ لَا ذَنْبَ لَهٗ)) "गुनाह से हक़ीक़ी तौबा करने वाला बिल्कुल ऐसे है जैसे उसने कभी वह गुनाह किया ही नहीं था।" सिदक़े दिल से तौबा की जाये तो नामाये आमाल बिल्कुल धुल जाता है। लिहाज़ा ऐसी किसी तशवीश को बिल्कुल अपने क़रीब मत आने दो।

اِذَا مَا اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاَحْسَنُوْا ۭ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ۝

"जब तक वह तक़वा की रविश इख़्तियार किये रखें और ईमान लायें और नेक अमल करें, फिर मज़ीद तक़वा इख़्तियार करें और ईमान लायें, फिर और तक़वा में बढ़ें और दर्जा-ए-अहसान पर फ़ाइज़ हो जायें। और अल्लाह तआला मोहसिनों से मोहब्बत करता है।"

यह दरअसल तीन दर्जे हैं। पहला दर्जा 'इस्लाम' है। यानि अल्लाह को मान लिया, रसूल ﷺ को मान लिया और उसके अहकाम पर चल पड़े। इससे ऊपर का दर्जा 'ईमान' है, यानि दिल का कामिल यक़ीन, जो ईमान के दिल में उतर जाने से हासिल होता है। {وَلٰكِنَّ اللّٰهَ حَبَّبَ اِلَيْكُمُ الْاِيْمَانَ وَزَيَّنَهٗ فِيْ قُلُوْبِكُمْ} (अल् हुजरात:7) के मिस्दाक़ ईमान क़ल्ब में उतर जायेगा तो आमाल की कैफ़ियत बदल जायेगी, आमाल में एक नयी शान पैदा हो जायेगी, ज़िन्दगी के अन्दर एक नया रंग आ जायेगा जोकि ख़ालिस अल्लाह का रंग होगा। अज़रुए अल्फ़ाज़े क़ुरानी: {صِبْغَةَ اللّٰهِ ۚ وَمَنْ اَحْسَنُ مِنَ اللّٰهِ صِبْغَةً} (सूरह बक़रह:138)। और इससे भी आगे जब ईमान "अय्नुल यक़ीन" का दर्जा हासिल कर ले तो यही दर्जा अहसान है। हदीसे नबवी ﷺ में इसकी कैफ़ियत यह बयान हुई है: ((اَنْ تَعْبُدَ اللّٰهَ كَاَنَّكَ تَرَاهُ، فَاِنْ لَّمْ تَكُنْ تَرَاهُ فَاِنَّهٗ يَرَاكَ)) "यह कि तू अल्लाह की इबादत इस तरह करे गोया कि तू उसे देख रहा है, और अगर तू उसे नहीं देख रहा (यह कैफ़ियत पैदा नहीं हो रही) तो फिर (यह कैफ़ियत तो पैदा होनी चाहिये कि) वह तुझे देखता है।" यानि तुम अल्लाह की बन्दगी करो, अल्लाह के लिये जिहाद करो, उसकी राह में भाग-दौड़ करो, और इसमें तक़वा की कैफ़ियत ऐसी हो जाये कि जैसे तुम अल्लाह को अपनी आँखों से देख रहे हो।

अहसान की यह तारीफ़ "हदीसे जिब्राइल" में मौजूद है। इस हदीस को उम्मुस सुन्नत कहा गया है, जैसे सूरतुल फ़ातिहा को उम्मुल क़ुरान का नाम दिया गया है। जिस तरह सूरतुल फ़ातिहा असासुल क़ुरान है, इसी तरह हदीसे जिब्राइल (अलै०) सुन्नत की असास है। इस हदीस में हमें यह

तफ़सील मिलती है कि हज़रत जिब्राइल अलै० इंसानी शक्ल में हुज़ूर ﷺ के पास आये। सहाबा रज़ि० का मजमा था, वहाँ उन्होंने कुछ सवालात किये। हज़रत जिब्राइल अ० ने पहला सवाल इस्लाम के बारे में किया: يَا مُحَمَّدُ اَخْبِرْنِىْ عَنِ الْاِسْلَامِ! इसके जवाब में आप ﷺ ने फ़रमाया: "इस्लाम यह है कि तुम इस बात की गवाही दो कि अल्लाह के सिवा कोई मअबूद नहीं और मुहम्मद (ﷺ) अल्लाह के रसूल हैं, नमाज़ क़ायम करो, ज़कात अदा करो, रमज़ान के रोज़े रखो और बैतुल्लाह का हज करो अगर तुम्हें इसके लिये सफ़र की इस्ततआत हो।" यानि इस्लाम के ज़िमन में आमाल का ज़िक्र आ गया। फिर जिब्राइल अलै० ने कहा कि मुझे ईमान के बारे में बतलाइये! इस पर आप ﷺ ने फ़रमाया: "यह कि तुम ईमान लाओ अल्लाह पर, उसके फ़रिश्तों पर, उसकी किताबों पर, उसके रसूलों पर, यौमे आख़िरत पर और तक़दीर की अच्छाई और बुराई पर।" अब यहाँ यह नुक्ता गौरतलब है कि ईमान तो इस्लाम में भी मौजूद है, यानि ज़बानी और क़ानूनी ईमान, लेकिन दूसरे दर्जे में ईमान को इस्लाम से अलैहदा किया गया है और आमाले सालेहा का ताल्लुक़ ईमान के बजाये इस्लाम से बताया गया है। इसलिये कि जब ईमान दिल में उतर कर यक़ीन की सूरत इख़्तियार कर जाये तो फिर आमाल का ज़िक्र अलग से करने की ज़रूरत नहीं रहती। ईमान के इस मरहले पर आमाल लाज़िमन दुरुस्त हो जायेंगे। फिर ईमान जब दिल में मज़ीद गहरा और पुख्ता होता है तो आमाल भी मज़ीद दुरुस्त होंगे। यूँ समझिये कि जितना-जितना दरख़्त ऊपर जा रहा है उसी निस्बत से जड़ नीचे गहराई में उतर रही है। ईमान की जड़ ने दिल की ज़मीन में क़रार पकड़ा तो इस्लाम से ईमान बन गया। जब यह जड़ मज़ीद गहरी हुई तो तीसरी मंज़िल यानि अहसान तक रसाई हो गयी और यहाँ आमाल में मज़ीद निखार पैदा हुआ। चुनाँचे जब हज़रत जिब्राइल अलै० ने अहसान के बारे में पूछा तो आप ﷺ ने फ़रमाया: "अहसान यह है कि तुम अल्लाह की इबादत इस तरह करो गोया कि तुम उसे देख रहे हो...." आप ﷺ का जवाब तीन रिवायतों में तीन मुख्तलिफ़ अल्फ़ाज़ में नक़ल हुआ है: (1)...اَنْ تَخْشَى اللهَ تَعَالٰى كَاَنَّكَ تَرَاهُ (2)...اَنْ تَعْبُدَ اللهَ كَاَنَّكَ تَرَاهُ (3)...اَنْ تَعْمَلَ لِلّٰهِ كَاَنَّكَ تَرَاهُ अगले अल्फ़ाज़ ((فَاِنْ لَمْ تَكُنْ تَرَاهُ فَاِنَّهُ يَرَاكَ)) तीनों रिवायतों में यक्सां हैं। यानि एक बंदा-ए-मोमिन अल्लाह की बन्दगी, अल्लाह की परस्तिश, अल्लाह के लिये भाग-दौड़, अल्लाह के लिये अमल, अल्लाह के लिये जिहाद ऐसी कैफ़ियत से सरशार (समर्पित) होकर कर रहा हो गोया वह अपनी आँखों से अल्लाह को देख रहा है। तो जब अल्लाह सामने होगा, तो फिर कैसे कुछ हमारे जज़्बाते अबदियत होंगे, कैसी-कैसी हमारी क़ल्बी कैफ़ियात होंगी। इस दुनिया में भी यह कैफ़ियत हासिल हो सकती है, लेकिन यह कैफ़ियत बहुत कम लोगों को हासिल होती है। चुनाँचे अगर यह कैफ़ियत हासिल ना हो सके तो अहसान का एक इससे निचला दर्जा भी है। यानि कम से कम यह बात हर वक़्त मुस्तहज़र रहे कि अल्लाह मुझे देख रहा है। तो यह हैं वह तीन दर्जे जिनका ज़िक्र इस आयत में है।

"तहरीके इस्लामी की अख्लाक़ी बुनियादें" मौलाना मौदूदी मरहूम की एक क़ाबिले क़द्र किताब है। इसमें मौलाना ने इस्लाम, ईमान, अहसान और तक़वा चार मरातिब बयान किये हैं। लेकिन मेरे नज़दीक तक़वा अलैहदा से कोई मरतबा व मक़ाम नहीं है। तक़वा वह रूह (Spirit) और वह क़ुव्वते मोहरका (driving force) है जो इन्सान को नेकी की तरफ़ धकेलती और उभारती है। चुनाँचे आयत ज़ेरे नज़र में तक़वा की तकरार का मफ़हूम यूँ है कि तक़वा ने आपको baseline से ऊपर उठाया और अब आपके ईमान और अमले सालेह में और रंग पैदा हो गया {اِذَا مَا اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ}। फिर तक़वा में मजीद इज़ाफ़ा हुआ और तक़वा ने आपको मज़ीद ऊपर उठाया तो अब वह यक़ीन वाला ईमान पैदा हो गया {ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا}। अब यहाँ अमले सालेह के अलैहदा ज़िक्र की ज़रूरत ही नहीं। जब दिल में ईमान उतर गया तो आमाल ख़ुद-ब-ख़ुद दुरुस्त हो गये। फिर तक़वा अगर मज़ीद रूबा तरक्क़ी है {ثُمَّ اتَّقَوْا} तो उसके नतीजे में { وَّاَحْسَنُوْا ۭ } का दर्जा आ जायेगा, यानि इन्सान दर्जा-ए-अहसान पर फ़ाइज़ हो जायेगा। (اللهم ربنا اجعلنا منهم- आमीन!)

ईमान और तक़वा से आमाल की दुरुस्ती के ज़िमन में नबी अकरम ﷺ का यह फ़रमान पेशे नज़र रहना चाहिये:

اَلَا وَاِنَّ فِى الْجَسَدِ مُضْغَةً، اِذَا صَلَحَتْ صَلَحَ الْجَسَدُ كُلُّهُ، وَاِذَا فَسَدَتْ فَسَدَ الْجَسَدُ كُلُّهُ، اَلَا وَهِىَ الْقَلْبُ

"आगाह रहो, यक़ीनन जिस्म के अन्दर एक गोश्त का लोथड़ा है, जब वह दुरुस्त हो तो सारा जिस्म दुरुस्त होता है और जब वह बिगड़ जाये तो सारा जिस्म बिगड़ जाता है। आगाह रहो कि वह दिल है।"

وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ۝٩٣ *"और अल्लाह ऐसे मोहसिन बन्दों को महबूब रखता है।"*

अल्लाह के जो बन्दे दर्जा-ए-अहसान तक पहुँच जाते हैं वह उसके महबूब बन जाते हैं।

इस सूरह मुबारका (आयत 71) में पहले एक ग़लत रास्ते की निशानदेही की गयी थी: {فَعَمُوْا وَصَمُّوْا .... ثُمَّ عَمُوْا وَصَمُّوْا....} यह गुमराही व ज़लालत के मुख्तलिफ़ मराहिल का ज़िक्र है कि वह अंधे और बहरे हो गये, अल्लाह ने फिर ढील दी तो उस पर वह और भी अंधे और बहरे हो गये, अल्लाह ने मज़ीद ढील दी तो वह और ज़्यादा अंधे और बहरे हो गये। उस रास्ते पर इन्सान क़दम-ब-क़दम गुमराही की दलदल में धँसता चला जाता है। मगर एक रास्ता यह है, हिदायत का रास्ता, इस्लाम, ईमान, अहसान और तक़वा का रास्ता। यहाँ इन्सान को दर्जा-ब-दर्जा तरक्क़ी मिलती चली जाती है।

आयात 94 से 100 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَيَبْلُوَنَّكُمُ اللّٰهُ بِشَيْءٍ مِّنَ الصَّيْدِ تَنَالُهٗٓ اَيْدِيْكُمْ وَرِمَاحُكُمْ
لِيَعْلَمَ اللّٰهُ مَنْ يَّخَافُهٗ بِالْغَيْبِ ۚ فَمَنِ اعْتَدٰى بَعْدَ ذٰلِكَ فَلَهٗ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝٩٤
يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَقْتُلُوا الصَّيْدَ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ ۭ وَمَنْ قَتَلَهٗ مِنْكُمْ مُّتَعَمِّدًا
فَجَزَاۗءٌ مِّثْلُ مَا قَتَلَ مِنَ النَّعَمِ يَحْكُمُ بِهٖ ذَوَا عَدْلٍ مِّنْكُمْ هَدْيًۢا بٰلِغَ الْكَعْبَةِ اَوْ
كَفَّارَةٌ طَعَامُ مَسٰكِيْنَ اَوْ عَدْلُ ذٰلِكَ صِيَامًا لِّيَذُوْقَ وَبَالَ اَمْرِهٖ ۭ عَفَا اللّٰهُ عَمَّا
سَلَفَ ۭ وَمَنْ عَادَ فَيَنْتَقِمُ اللّٰهُ مِنْهُ ۭ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ ذُو انْتِقَامٍ ۝٩٥ اُحِلَّ لَكُمْ صَيْدُ
الْبَحْرِ وَطَعَامُهٗ مَتَاعًا لَّكُمْ وَلِلسَّيَّارَةِ ۚ وَحُرِّمَ عَلَيْكُمْ صَيْدُ الْبَرِّ مَا دُمْتُمْ حُرُمًا ۭ
وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِيْٓ اِلَيْهِ تُحْشَرُوْنَ ۝٩٦ جَعَلَ اللّٰهُ الْكَعْبَةَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ قِيٰمًا
لِّلنَّاسِ وَالشَّهْرَ الْحَرَامَ وَالْهَدْيَ وَالْقَلَاۗىِٕدَ ۭ ذٰلِكَ لِتَعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا فِي
السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَاَنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۝٩٧ اِعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ
الْعِقَابِ وَاَنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝٩٨ مَا عَلَى الرَّسُوْلِ اِلَّا الْبَلٰغُ ۭ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا
تُبْدُوْنَ وَمَا تَكْتُمُوْنَ ۝٩٩ قُلْ لَّا يَسْتَوِي الْخَبِيْثُ وَالطَّيِّبُ وَلَوْ اَعْجَبَكَ كَثْرَةُ
الْخَبِيْثِ ۚ فَاتَّقُوا اللّٰهَ يٰٓاُولِي الْاَلْبَابِ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝١٠٠

इस सूरह मुबारका के शुरू में हालते अहराम में शिकार करने की मुमानियत (prohibition) आ चुकी है। अब अल्लाह की उस सुन्नत का ज़िक्र है कि अल्लाह अपने मानने वालों को आज़माता है, सख्त तरीन इम्तिहान लेता है। फ़र्ज़ कीजिये कि हाजियों का एक क़ाफ़िला जा रहा है, सबने अहराम बाँधा हुआ है, इत्तेफ़ाक़ से उनके पास खाने को कुछ भी नहीं। अब एक हिरन अठखेलियाँ करते हुए क़रीब आ रहा है, भूख भी सता रही है, ज़रूरत भी है, चाहे तो ज़रा सा नेज़ा मारें और शिकार कर लें या वैसे ही भाग कर पकड़ लें, लेकिन पकड़ नहीं सकते, शिकार नहीं कर सकते, क्योंकि अहराम में हैं और इस हालत में इजाज़त नहीं है। तो अल्लाह तआला अपने बन्दों को इस तरह आज़माता है।

आयत 94

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَيَبْلُوَنَّكُمُ اللّٰهُ بِشَيْءٍ مِّنَ الصَّيْدِ

"ऐ अहले ईमान! अल्लाह तुम्हें लाज़िमन आज़माएगा किसी ऐसे शिकार के ज़रिये"

تَنَالُهٗٓ اَيْدِيْكُمْ وَرِمَاحُكُمْ

"जिसको पहुँचते होंगे (आसानी से) तुम्हारे हाथ और नेज़े"

لِيَعْلَمَ اللّٰهُ مَنْ يَّخَافُهٗ بِالْغَيْبِ ۚ

"ताकि अल्लाह देख ले उन लोगों को जो गैब में होते हुए भी उससे डरते रहते हैं।"

शिकार पहुँच में भी है, उनके हाथों और नेज़ों की ज़द में है, ज़रूरत भी है, चाहे तो शिकार कर लें, लेकिन मजबूर हैं, क्योंकि अहराम बाँधा हुआ है। तो जिसके दिल में ईमान होगा तो वह अपनी भूख को बर्दाश्त करेगा, अल्लाह के हुक्म को नहीं तोड़ेगा।

فَمَنِ اعْتَدٰى بَعْدَ ذٰلِكَ فَلَهٗ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝٩٤

"अब इसके बाद जिसने ज़्यादती की तो उसके लिये दर्दनाक अज़ाब है।"

आयत 95

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَقْتُلُوا الصَّيْدَ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ ۭ

"ऐ ईमान वालो! जब तुम अहराम की हालत में हो तो किसी शिकार को क़त्ल मत करो।"

وَمَنْ قَتَلَهٗ مِنْكُمْ مُّتَعَمِّدًا فَجَزَاۗءٌ مِّثْلُ مَا قَتَلَ مِنَ النَّعَمِ

"तो जो कोई तुम में से उसे क़त्ल (शिकार) कर बैठे जान-बूझ कर, तो फिर उसका कफ़्फ़ारा होगा उसी तरह का एक चौपाया जैसा कि उसने क़त्ल किया"

कफ़्फ़ारे के तौर पर अल्लाह की राह में वैसा ही एक चौपाया सदक़ा किया जायेगा। यानि अगर आपने हिरन मारा तो बकरी या भेड़ दी जायेगी और अगर नील गाय मार दी तो फिर गाय बतौर कफ़्फ़ारा देना होगी। इस तरह जिस क़िस्म और जिस जसामत का हैवान शिकार किया गया है, उसके बराबर का चौपाया सदक़ा करना होगा।

يَحْكُمُ بِهٖ ذَوَا عَدْلٍ مِّنْكُمْ

"जिसका फ़ैसला तुम में से दो आदिल आदमी करेंगे"

यानि दो मुत्तक़ी और मोअतबर अश्खास इसकी गवाही देंगे कि यह जानवर उस शिकार किये जाने वाले जानवर के बराबर है।

هَدْيًۢا بٰلِغَ الْكَعْبَةِ

"यह नज़र की हैसियत से खाना काबा तक पहुँचाया जाये"

यह जानवर हदी के तौर पर खाना काबा की नज़र किया जायेगा।

اَوْ كَفَّارَةٌ طَعَامُ مَسٰكِيْنَ

"या फिर उसका कफ़्फ़ारा है कुछ मसाकीन को खाना खिलाना"

इसमें फ़ुक़हा ने लिखा है कि अगर अनाज या रक़म देना हो तो वह सदक़ाये फ़ितर के हिसाब से होगी।

اَوْ عَدْلُ ذٰلِكَ صِيَامًا

"या उतने ही रोज़े रखना"

यह देखना होगा कि जो जानवर शिकार हुआ है उसे कितने आदमी खा सकते थे। उतने आदमियों को खाना खिलाया जाये या उतने दिन के रोज़े रखे जायें।

"ताकि वह अपने किये की सज़ा चखे।" لِّيَذُوقَ وَبَالَ أَمْرِهِ

"अल्लाह माफ़ कर चुका है जो पहले हो चुका है।" عَفَا اللَّهُ عَمَّا سَلَفَ

"लेकिन जो कोई फिर ऐसा करेगा तो अल्लाह उससे इन्तेक़ाम लेगा, और यक़ीनन अल्लाह तआला ज़बरदस्त है, इन्तेक़ाम लेने वाला।" وَمَنْ عَادَ فَيَنْتَقِمُ اللَّهُ مِنْهُ ۗ وَاللَّهُ عَزِيزٌ ذُو انْتِقَامٍ ﴿٩٥﴾

आयत 96

"(अलबत्ता) तुम्हारे लिये हलाल कर दिया गया है समुन्दर का शिकार और उसका खाना" أُحِلَّ لَكُمْ صَيْدُ الْبَحْرِ وَطَعَامُهُ

समुन्दर और दरिया का शिकार हालते अहराम में भी हलाल है। हाजी लोग अगर कश्तियों और बहरी जहाज़ों के ज़रिये से सफ़र कर रहे हों तो वह अहराम की हालत में भी मछली वगैरह का शिकार कर सकते हैं।

"तुम्हारे लिये और मुसाफ़िरों के लिये ज़ादे राह के तौर पर।" مَتَاعًا لَّكُمْ وَلِلسَّيَّارَةِ

समुन्दर की ख़ुराक (sea food) तो यूँ समझ लीजिये कि पूरी दुनिया के इंसानों के लिये गिज़ा का एक नया ख़ज़ाना है जो सामने आया है। यह बहुत सी खराबियों और बीमारियों से बचाने वाली भी है। यही वजह है कि दुनिया में यह आज-कल बहुत मक़बूल हो रही है।

"लेकिन खुश्की पर शिकार करना तुम्हारे लिये हराम कर दिया गया है जब तक कि तुम अहराम में हो।" وَحُرِّمَ عَلَيْكُمْ صَيْدُ الْبَرِّ مَا دُمْتُمْ حُرُمًا

"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार किये रखो जिसकी तरफ़ तुम्हें जमा कर दिया जायेगा।" وَاتَّقُوا اللَّهَ الَّذِي إِلَيْهِ تُحْشَرُونَ ﴿٩٦﴾

तुम सब उसकी तरफ़ घेराव करके ले जाये जाओगे।

आयत 97

"अल्लाह ने काबे को, जो कि बैतुल हराम है, लोगों के लिये क़ियाम का बाइस बना दिया है" جَعَلَ اللَّهُ الْكَعْبَةَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ قِيَامًا لِّلنَّاسِ

"और हुरमत वाला महीना, क़ुर्बानी के जानवर और वह जानवर भी जिनके गलों में पट्टे डाल दिये गये हों" وَالشَّهْرَ الْحَرَامَ وَالْهَدْيَ وَالْقَلَائِدَ

यह सब अल्लाह तआला के शआइर (संस्कार) हैं और उसी के मुअय्यन करदा हैं। सूरत के शुरू में भी इनका ज़िक्र आ चुका है। यहाँ दरअसल तौसीक़ (confirmation) हो रही है कि यह सब चीज़ें ज़माना-ए-जाहिलियत की रिवायात नहीं हैं बल्कि खाना काबा की हुरमत और अज़मत की अलामत हैं।

"यह इसलिये कि तुम अच्छी तरह जान लो कि अल्लाह तआला को आसमानों और ज़मीन की हर शय का इल्म है" ذَٰلِكَ لِتَعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا فِي السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ

وَاَنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَیۡءٍ عَلِیۡمٌ ﴿۹۷﴾

"और यह कि अल्लाह हर शय का इल्म रखता है।"

आगे चल कर इन चीज़ों के मुक़ाबले में उन चार चीज़ों का ज़िक्र आयेगा जो अहले अरब के यहाँ बगैर किसी सनद के हराम कर ली गयी थीं।

आयत 98

اِعۡلَمُوۡۤا اَنَّ اللّٰهَ شَدِیۡدُ الۡعِقَابِ ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ غَفُوۡرٌ رَّحِیۡمٌ ﴿۹۸﴾

"जान लो कि अल्लाह सज़ा देने में बहुत सख्त है और यह कि अल्लाह ग़फ़ूर और रहीम भी है।"

यानि उसकी तो दोनों शानें एक साथ जलवागर हैं। अब देखो कि तुम अपने आपको किस शान के साथ मुताल्लिक़ कर रहे हो और ख़ुद को कैसे सुलूक का मुस्तहिक़ बना रहे हो? उसकी अक़ूबत का या उसकी रहमत और मग़फ़िरत का?

आयत 99

مَا عَلَی الرَّسُوۡلِ اِلَّا الۡبَلٰغُ ؕ

"रसूल (ﷺ) पर सिवाय पहुँचा देने के और कोई ज़िम्मेदारी नहीं है।"

وَاللّٰهُ یَعۡلَمُ مَا تُبۡدُوۡنَ وَمَا تَکۡتُمُوۡنَ ﴿۹۹﴾

"और अल्लाह जानता है जो कुछ तुम ज़ाहिर करते हो और जो कुछ तुम छुपाते हो।"

जब रसूल अल्लाह ﷺ ने पैगाम पहुँचा दिया तो बाक़ी सारी ज़िम्मेदारी तुम्हारी है।

आयत 100

قُلۡ لَّا یَسۡتَوِی الۡخَبِیۡثُ وَالطَّیِّبُ وَلَوۡ اَعۡجَبَکَ کَثۡرَةُ الۡخَبِیۡثِ ۚ

"(ऐ नबी ﷺ) कह दीजिये कि नापाक और पाक बराबर नहीं हो सकते, चाहे नापाक शय की कसरत तुम्हें अच्छी लगे।"

इन्सान तो चाहता है कि उसके पास हर शय की बहुतात हो, लेकिन नाजायज़ और हराम तरीक़े से कमाया हुआ माल अगरचे कसरत से जमा हो गया हो मगर है तो खबीस और नापाक ही। बेशक उसकी चकाचौंध तुम्हारी आँखों को खीराह (प्रभावित) कर रही हो मगर उसमें तुम्हारे लिये कोई भलाई नहीं है। बक़ौल अल्लामा इक़बाल:

नज़र को खैर करती है चमक तहज़ीबे हाज़िर की
यह सन्नाई मगर झूठे नगों की रेज़ा कारी है!

فَاتَّقُوا اللّٰهَ یٰۤاُولِی الۡاَلۡبَابِ لَعَلَّکُمۡ تُفۡلِحُوۡنَ ﴿۱۰۰﴾ ۚ

"तो अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो ऐ होशमंदो, ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

आयात 101 से 108 तक

یٰۤاَیُّهَا الَّذِیۡنَ اٰمَنُوۡا لَا تَسۡـَٔلُوۡا عَنۡ اَشۡیَآءَ اِنۡ تُبۡدَ لَکُمۡ تَسُؤۡکُمۡ ۚ وَاِنۡ تَسۡـَٔلُوۡا عَنۡهَا حِیۡنَ یُنَزَّلُ الۡقُرۡاٰنُ تُبۡدَ لَکُمۡ ؕ عَفَا اللّٰهُ عَنۡهَا ؕ وَاللّٰهُ غَفُوۡرٌ حَلِیۡمٌ ﴿۱۰۱﴾ قَدۡ سَاَلَهَا قَوۡمٌ مِّنۡ قَبۡلِکُمۡ ثُمَّ اَصۡبَحُوۡا بِهَا کٰفِرِیۡنَ ﴿۱۰۲﴾ مَا جَعَلَ اللّٰهُ مِنۡۢ بَحِیۡرَةٍ وَّلَا سَآئِبَةٍ وَّلَا وَصِیۡلَةٍ وَّلَا حَامٍ ۙ وَّلٰکِنَّ الَّذِیۡنَ کَفَرُوۡا یَفۡتَرُوۡنَ عَلَی اللّٰهِ الۡکَذِبَ ؕ وَاَکۡثَرُهُمۡ لَا یَعۡقِلُوۡنَ ﴿۱۰۳﴾ وَاِذَا قِیۡلَ لَهُمۡ تَعَالَوۡا اِلٰی مَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ وَاِلَی الرَّسُوۡلِ قَالُوۡا حَسۡبُنَا مَا وَجَدۡنَا عَلَیۡهِ اٰبَآءَنَا ؕ اَوَلَوۡ کَانَ اٰبَآؤُهُمۡ لَا یَعۡلَمُوۡنَ شَیۡـًٔا وَّلَا یَهۡتَدُوۡنَ ﴿۱۰۴﴾ یٰۤاَیُّهَا الَّذِیۡنَ اٰمَنُوۡا عَلَیۡکُمۡ اَنۡفُسَکُمۡ ۚ لَا یَضُرُّکُمۡ مَّنۡ ضَلَّ اِذَا اهۡتَدَیۡتُمۡ ؕ اِلَی اللّٰهِ

مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ ۝١٠٥ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا شَهَادَةُ
بَيْنِكُمْ اِذَا حَضَرَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ حِيْنَ الْوَصِيَّةِ اثْنٰنِ ذَوَا عَدْلٍ مِّنْكُمْ اَوْ اٰخَرٰنِ
مِنْ غَيْرِكُمْ اِنْ اَنْتُمْ ضَرَبْتُمْ فِي الْاَرْضِ فَاَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةُ الْمَوْتِ ۭ تَحْبِسُوْنَهُمَا
مِنْۢ بَعْدِ الصَّلٰوةِ فَيُقْسِمٰنِ بِاللّٰهِ اِنِ ارْتَبْتُمْ لَا نَشْتَرِيْ بِهٖ ثَمَنًا وَّلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى ۙ
وَلَا نَكْتُمُ شَهَادَةَ اللّٰهِ اِنَّآ اِذًا لَّمِنَ الْاٰثِمِيْنَ ۝١٠٦ فَاِنْ عُثِرَ عَلٰٓى اَنَّهُمَا اسْتَحَقَّآ اِثْمًا
فَاٰخَرٰنِ يَقُوْمٰنِ مَقَامَهُمَا مِنَ الَّذِيْنَ اسْتَحَقَّ عَلَيْهِمُ الْاَوْلَيٰنِ فَيُقْسِمٰنِ بِاللّٰهِ
لَشَهَادَتُنَآ اَحَقُّ مِنْ شَهَادَتِهِمَا وَمَا اعْتَدَيْنَآ ۚ اِنَّآ اِذًا لَّمِنَ الظّٰلِمِيْنَ ۝١٠٧ ذٰلِكَ اَدْنٰٓى
اَنْ يَّاْتُوْا بِالشَّهَادَةِ عَلٰي وَجْهِهَآ اَوْ يَخَافُوْٓا اَنْ تُرَدَّ اَيْمَانٌۢ بَعْدَ اَيْمَانِهِمْ ۭ وَاتَّقُوا اللّٰهَ
وَاسْمَعُوْا ۭ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ۝١٠٨

आयत 101

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَسْـَٔلُوْا عَنْ اَشْيَاۗءَ اِنْ تُبْدَ لَكُمْ تَسُؤْكُمْ ۚ

"ऐ अहले ईमान! उन चीज़ों के मुताल्लिक़ सवाल ना किया करो जो अगर तुम पर ज़ाहिर कर दी जायें तो तुम्हें बुरी लगें।"

यह एक ख़ास क़िस्म की मज़हबी ज़हनियत का तज़किरा है। बाज़ लोग बिला ज़रूरत हर बात को खोदने, कुरेदने और बाल की खाल उतारने के आदी होते हैं। अगर किसी चीज़ के बारे में अल्लाह तआला ने ख़ुद ख़ामोशी इख़्तियार फ़रमायी है तो उस बारे में ख्वाह मा ख्वाह सवाल करना अपनी ज़िम्मेदारी को बढ़ाने वाली बात है। चुनाँचे हज के बारे में जब सूरह आले इमरान (आयत 97) में हुक्म नाज़िल हुआ तो एक साहब ने सवाल किया कि हुज़ूर क्या हर साल हज फ़र्ज़ है? आप ﷺ ने सवाल सुन लिया लेकिन रुखे मुबारक दूसरी तरफ़ कर लिया। अब वह साहब उधर तशरीफ़ ले आये और फिर अर्ज़ किया, हुज़ूर क्या हज हर साल फ़र्ज़ है? हुज़ूर ﷺ ने फिर ऐराज़ फ़रमाया। जब उन्होंने यही सवाल तीसरी मरतबा किया तो फिर आप ﷺ नाराज़ हुए और फ़रमाया कि देखो अगर मैं हाँ कह दूँ तो तुम लोगों पर क़यामत तक के लिये हर साल हज फ़र्ज़ हो जायेगा। जिस चीज़ में अल्लाह तआला ने अहतमाल (संभावना) रखा है उसमें तुम्हारी बेहतरी है। जो शख्स हर साल कर सकता हो वह हर साल कर ले, लेकिन फ़र्ज़ियत के साथ हर साल की क़ैद अल्लाह ने नहीं लगायी है। बेजा सवाल करके तुम अपने लिये तंगी पैदा ना करो। जैसे गाय के मामले में बनी इसराइल ने किया था कि उसका रंग कैसा हो? उसकी उम्र क्या हो? और कैसी गाय हो? वगैरह-वगैरह, जितने सवालात करते गये उतनी ही शराइत लागू होती गयीं। इस नौइयत के सारे सवाल इसी ज़िमन में आते हैं।

وَاِنْ تَسْـَٔلُوْا عَنْهَا حِيْنَ يُنَزَّلُ الْقُرْاٰنُ تُبْدَ لَكُمْ ۭ

"और अगर तुम सवाल करोगे, ऐसी चीज़ों के बारे में जबकि अभी क़ुरान का नुज़ूल जारी है तो तुम्हारे लिये वह ज़ाहिर कर दी जायेंगी।"

अल्लाह तआला ने अपनी हिकमत के तहत कई चीज़ों को परदे में रखा है, क्योंकि वह समझता है कि इनको ज़ाहिर करने में तुम्हारे लिये तंगी हो जायेगी, बोझ ज़्यादा हो जायेगा, यह तुम पर गिराँ गुज़रेंगी। लेकिन अगर सवाल करोगे तो फिर उनको ज़ाहिर कर दिया जायेगा।

عَفَا اللّٰهُ عَنْهَا ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ حَلِيْمٌ ۝١٠١

"अल्लाह तआला ने इसमें दरगुज़र से काम लिया है, अल्लाह बख्शने वाला और बुर्दबार है।"

बाज़ चीज़ों के बारे में जो अल्लाह ने तुम पर नरमी की है और तुम्हें तंगी से बचाया है, वह इसलिये है कि वह ग़फ़ूर और हलीम है। यह किसी निस्यान, भूल या ग़लती की वजह से नहीं हुआ (माज़ अल्लाह!)

आयत 102

قَدْ سَأَلَهَا قَوْمٌ مِّنْ قَبْلِكُمْ ثُمَّ أَصْبَحُوا بِهَا كٰفِرِيْنَ ۝

"तुमसे पहले एक क़ौम (अहले किताब) ने इस क़िस्म के सवालात किये थे और फिर वह उनका इन्कार करने वाले बन गये थे।"

अब यहाँ उन चीज़ों का ज़िक्र आ रहा है जो उनके यहाँ ख्वाह मा ख्वाह बहुत ज़्यादा मुक़द्दस हो गयी थीं। यह गोया अल्लाह तआला के उन चार शआइर के मुक़ाबले की चार चीज़ें हैं जिनका ज़िक्र पीछे आयत 97 में हुआ है: {جَعَلَ اللّٰهُ الْكَعْبَةَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ قِيٰمًا لِّلنَّاسِ وَالشَّهْرَ الْحَرَامَ وَالْهَدْيَ وَالْقَلَآئِدَ} वहाँ इन चार चीज़ों की तौसीक़ की गयी थी कि वह वाक़िअतन अल्लाह की शरीअत के अजज़ा हैं, उनका अहतराम और उनकी हुरमत को मल्हूज़ रखना अहले ईमान पर लाज़िम है। लेकिन यहाँ तवज्जो दिलाई जा रही है कि कुछ चीज़ें तुम्हारे यहाँ ऐसी राइज हैं जो दौरे जाहिलियत के मुशरिकाना अवहाम (अंधविश्वास) की यादगारें हैं। चुनाँचे फ़रमाया:

आयत 103

مَا جَعَلَ اللّٰهُ مِنْۢ بَحِيْرَةٍ وَّلَا سَآئِبَةٍ وَّلَا وَصِيْلَةٍ وَّلَا حَامٍ ۙ

"अल्लाह ने ना तो बहीरा को कुछ चीज़ बनाया है, ना सायबा, ना वसीला और ना हाम को"

इन चीज़ों के तक़द्दुस की अल्लाह की तरफ़ से कोई सनद नहीं। बहीरा, सायबा, वसीला और हाम के बारे में बहुत से अक़वाल हैं, लेकिन जलीलुल क़द्र ताबई हज़रत सईद बिन मुसैब रहि० ने इन अल्फ़ाज़ की जो तफ़सील बयान की है, वह सही बुखारी (किताब तफ़सीरुल क़ुरान) में वारिद हुई है। मौलाना तक़ी उस्मानी साहब ने भी उसे अपने हवाशी में नक़ल किया है। बहीरा: ऐसा जानवर जिसका दूध बुतों के नाम कर दिया जाता था और कोई उसे अपने काम में ना लाता था। सायबा: वह जानवर जो बुतों के नाम पर, हमारे ज़माने के सांड की तरह, छोड़ दिया जाता था। वसीला: जो ऊँटनी मुसलसल मादा बच्चों को जन्म देती और दरमियान में कोई नर बच्चा पैदा ना होता, उसे भी बुतों के नाम पर छोड़ दिया जाता था। हाम: नर ऊँट जो एक ख़ास तादाद में जफ्ती (संभोग) कर चुका होता, उसे भी बुतों के नाम पर छोड़ दिया जाता था। इस तरह के जानवरों को बुतों के नाम मंसूब करके आज़ाद छोड़ दिया जाता था कि अब उन्हें कोई हाथ ना लगाये, कोई उनसे इस्तफ़ादा ना करे, कोई उनका गोश्त ना खाये ना सदक़ा दे, ना उनसे कोई ख़िदमत ले, बस उनका अहतराम किया जाये। लिहाज़ा वाज़ेह कर दिया गया कि अल्लाह तआला की तरफ़ से ऐसे कोई अहकाम नहीं दिये गये, बल्कि फ़रमाया:

وَلٰكِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا يَفْتَرُوْنَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ ۭ وَاَكْثَرُهُمْ لَا يَعْقِلُوْنَ ۝

"लेकिन यह काफ़िर अल्लाह पर इफ़तरा करते (झूठ गढ़ते) हैं, और उनकी अक्सरियत अक़्ल से आरी है।"

यह लोग बगैर सोचे समझे अल्लाह के ज़िम्मे झूठी बातें लगाते रहते हैं।

आयत 104

وَاِذَا قِيْلَ لَهُمْ تَعَالَوْا اِلٰى مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَاِلَى الرَّسُوْلِ

"और जब उन्हें कहा जाता है कि आओ उस चीज़ की तरफ़ जो अल्लाह ने नाज़िल फ़रमायी है और आओ अल्लाह के रसूल की तरफ़"

इस हुक्म (कि आओ अल्लाह के रसूल की तरफ़) की तर्जुमानी अल्लामा इक़बाल ने क्या ख़ूबसूरत अल्फ़ाज़ में की है:

ब मुस्तफ़ा ﷺ ब रसां ख्वीश रा कि दीं हमा ऊस्त
अगर बाव नरसीदी तमाम बू लहबीस्त

قَالُوْا حَسْبُنَا مَا وَجَدْنَا عَلَيْهِ اٰبَآءَنَا ۭ

"वह कहते हैं हमारे लिये वही काफ़ी है जिस पर हमने अपने आबा व अजदाद को पाया।"

यानि हमारे आबा व अजदाद जो इतने अरसे से इन चीज़ों पर अमल करते चले आ रहे थे तो क्या वह जाहिल थे? यही बातें आज भी सुनने को मिलती

हैं। किसी रस्म के बारे में आप किसी को बतायें कि इसकी दीन में कोई सनद नहीं है और सहाबा रज़ि० के यहाँ इसका कोई वजूद ना था तो उसका जवाब होगा कि हमने तो अपने बाप-दादा को यूँ ही करते देखा है।

"ख्वाह उनके आबा व अजदाद ऐसे रहे हों कि ना उन्हें कोई इल्म हासिल हुआ हो ना ही वह हिदायत पर हों (फिर भी)?"

اَوَلَوۡ كَانَ اٰبَآؤُهُمۡ لَا يَعۡلَمُوۡنَ شَيۡـًٔا وَّلَا يَهۡتَدُوۡنَ ﴿۲۱﴾

जैसे तुम अल्लाह की मख्लूक़ हो वैसे ही वह भी मख्लूक़ थे। जैसे तुम ग़लत काम कर सकते हो और ग़लत आरा (राय) क़ायम कर सकते हो, वैसे ही वह भी ग़लतकार हो सकते थे।

आयत 105

"ऐ लोगो जो ईमान लाये हो, तुम पर ज़िम्मेदारी है सिर्फ़ अपनी जानों की।"

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا عَلَيۡكُمۡ اَنۡفُسَكُمۡ‌ۚ

"जो कोई गुमराह हो जाये वह तुम्हें नुक़सान नहीं पहुँचा सकता, जबकि तुम हिदायत पर हो।"

لَا يَضُرُّكُمۡ مَّنۡ ضَلَّ اِذَا اهۡتَدَيۡتُمۡ‌ؕ

"अल्लाह ही की तरफ़ तुम सबको लौट कर जाना है, और वह तुम्हें बता देगा जो कुछ तुम करते रहे थे।"

اِلَى اللّٰهِ مَرۡجِعُكُمۡ جَمِيۡعًا فَيُنَبِّئُكُمۡ بِمَا كُنۡتُمۡ تَعۡمَلُوۡنَ ﴿۱۰۵﴾

यह आयत इस लिहाज़ से बहुत अहम है कि इसका एक ग़लत मतलब और मफ़हूम दौरे सहाबा रज़ि० में ही बाज़ लोगों ने निकाल लिया था। वह यह कि दावत व तब्लीग की कोई ज़िम्मेदारी हम पर नहीं है, हर एक पर अपनी ज़ात की ज़िम्मेदारी है, कोई क्या करता है इससे किसी दूसरे को कुछ गर्ज़ नहीं होनी चाहिये। क़ुरान जो कह रहा है कि "तुम पर ज़िम्मेदारी सिर्फ़ अपनी जानों की है। अगर तुम हिदायत पर हो तो जो गुमराह हुआ वह तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ेगा।" लिहाज़ा हर किसी को बस अपना अमल दुरुस्त रखना चाहिये, कोई दूसरा शख्स अगर ग़लत काम करता है तो उसे ख्वाह मा ख्वाह रोकने-टोकने, उसकी नाराज़गी मोल लेने, अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर की कोई ज़रूरत नहीं है। इस तरह की बातें जब हज़रत अबु बक्र सिद्दीक़ रज़ि० के इल्म में आईं तो आप रज़ि० ने बाक़ायदा एक ख़ुत्बा दिया कि लोगों मैं देख रहा हूँ कि तुम इस आयत का मतलब ग़लत समझ रहे हो। इसका मतलब तो यह है कि तुम्हारी सारी तब्लीग, कोशिश, अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर के बावजूद अगर कोई शख्स गुमराह रहता है तो उसका तुम पर कोई वबाल नहीं। सूरतुल बक़रह (आयत:119) में हम पढ़ चुके हैं: { وَّلَا تُسۡـَٔـلُ عَنۡ اَصۡحٰبِ الۡجَحِيۡمِ } "(ऐ नबी ﷺ) आपसे कोई बाज़ पुर्स नहीं होगी जहन्नमियों के बारे में।" यानि हम यह नहीं पूछेंगे कि हमने आप ﷺ को बशीर व नज़ीर बना कर भेजा था और फिर भी यह लोग जहन्नम में क्यों चले गये? लेकिन जहाँ तक दावत व तब्लीग, नसीहत व मौअज़त (उपदेश), अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर का ताल्लुक़ है, यह तो फ़राइज़ में से हैं। इस आयत की रू से यह फ़राइज़ साक़ित (माफ़) नहीं होते। बल्कि इसका दुरुस्त मफ़हूम यह है कि तुम्हारी सारी कोशिश के बावजूद अगर कोई शख्स नहीं मानता तो अब तुम्हारी ज़िम्मेदारी पूरी हो गयी। फ़र्ज़ कीजिये कि किसी का बच्चा आवारा हो गया है, वालिद अपनी इम्कानी हद तक कोशिश किये जा रहा है मगर बच्चा राहे रास्त पर नहीं आ रहा, तो ज़ाहिर बात है कि अगर उसने बच्चे की तरबियत और इस्लाह में कोई कोताही नहीं छोड़ी तो अल्लाह की तरफ़ से उसकी गुमराही का वबाल वालिद पर नहीं आयेगा। लेकिन अपना फ़र्ज़ अदा करना बहरहाल लाज़िम है।

आयत 106

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا شَهَادَةُ بَيْنِكُمْ اِذَا حَضَرَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ حِيْنَ الْوَصِيَّةِ اثْنٰنِ ذَوَا عَدْلٍ مِّنْكُمْ

"ऐ अहले ईमान, तुम्हारे दरमियान शहादत (का निसाब) है जबकि तुम में से किसी को मौत आ जाये और वह वसीयत कर रहा हो, तो तुम में से दो मोअतबर अश्खास (बतौर गवाह) मौजूद हों"

यानि मौत से क़ब्ल वसीयत के वक़्त अपने लोगों में से दो गवाह (मर्द) मुक़र्रर कर लो। वाज़ेह रहे कि वसीयत कुल तरके के एक तिहाई हिस्से से ज़्यादा की नहीं हो सकती। अगर ज़ायदाद ज़्यादा है तो उसका एक तिहाई हिस्सा भी ख़ासा ज़्यादा हो सकता है।

اَوْ اٰخَرٰنِ مِنْ غَيْرِكُمْ اِنْ اَنْتُمْ ضَرَبْتُمْ فِى الْاَرْضِ فَاَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةُ الْمَوْتِ

"या दूसरे दो आदमी तुम्हारे ग़ैरों में से अगर तुम ज़मीन में सफ़र पर (निकले हुए) हो और (हालते सफ़र में) तुम्हें मौत की मुसीबत पेश आ जाये।"

यानि हालते सफ़र में अगर किसी की मौत का वक़्त आ पहुँचे और वह वसीयत करना चाहता हो तो ऐसी सूरत में गवाहान ग़ैर क़ौम, किसी दूसरी बस्ती, किसी दूसरी बिरादरी और दूसरे क़बीले से भी मुक़र्रर किये जा सकते हैं, मगर आम हालात में अपनी बस्ती, अपने खानदान में रहते हुए कोई शख्स इन्तेक़ाल कर रहा है तो उसे वसीयत के वक़्त अपने लोगों, रिश्तेदारों और क़राबतदारों में से ही दो मोअतबर आदमियों को गवाह बनाना चाहिये।

تَحْبِسُوْنَهُمَا مِنْۢ بَعْدِ الصَّلٰوةِ

"तुम उन दोनों गवाहों को नमाज़ के बाद (मस्जिद में) रोक लो"

यानि जब वसीयत के बारे में मुतालक़ा लोग पूछें और उसमें कुछ शक का अहतमाल हो तो नमाज़ के बाद उन दोनों गवाहों को मस्जिद में रोक लिया जाये।

فَيُقْسِمٰنِ بِاللّٰهِ اِنِ ارْتَبْتُمْ

"फिर वह दोनों अल्लाह की क़सम खायें, अगर तुम्हें शक हो"

अगर तुम्हें उनके बारे में कोई शक हो कि कहीं यह वसीयत को बदल ना दें, कहीं उनसे गलती ना हो जाये तो उनसे क़सम उठवा लो। वह नमाज़ के बाद मस्जिद में हलफ़ की बुनियाद पर शहादत दें, और इस तरह कहें:

لَا نَشْتَرِىْ بِهٖ ثَمَنًا وَّلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى

"हम इसकी कोई क़ीमत वसूल नहीं करेंगे, अगरचे कोई क़राबतदार ही क्यों ना हो"

यानि हम इस शहादत से ना तो ख़ुद कोई नाजायज़ फ़ायदा उठाएँगे, ना किसी के हक़ में कोई नाइंसाफ़ी करेंगे और ना ही किसी रिश्तेदार अज़ीज़ को कोई नाजायज़ फ़ायदा पहुँचाएँगे।

وَلَا نَكْتُمُ شَهَادَةَ اللّٰهِ

"और ना हम छुपाएँगे अल्लाह की गवाही को"

गौर करें गवाही इतनी अज़ीम शय है कि इसे "شَهَادَةَ اللّٰهِ" कहा गया है, यानि अल्लाह की गवाही, अल्लाह की तरफ़ से अमानत।

اِنَّآ اِذًا لَّمِنَ الْاٰثِمِيْنَ

"अगर हम ऐसा करें तो यक़ीनन हम गुनाहगारों में शुमार होंगे।"

आयत 107

فَاِنْ عُثِرَ عَلٰٓى اَنَّهُمَا اسْتَحَقَّآ اِثْمًا

"फिर अगर मालूम हो जाये कि इन दोनों ने (झूठ बोल कर) गुनाह कमाया है"

हल्फ़िया बयान भी ग़लत दिया है और वसीयत में तरमीम (बदलाव) की है, इसके बावजूद कि नमाज़ के बाद मस्जिद के अन्दर हलफ़ उठा कर बात कर रहे हैं। आख़िर इन्सान हैं और हर मआशरे में हर तरह के इन्सान हर वक़्त मौजूद रहते हैं।

فَاٰخَرٰنِ يَقُوْمٰنِ مَقَامَهُمَا — *"तो अब दो और लोग उनकी जगह पर खड़े हों"*

مِنَ الَّذِيْنَ اسْتَحَقَّ عَلَيْهِمُ الْاَوْلَيٰنِ — *"उन लोगों में से जिनकी हक़ तल्फ़ी की है इन पहले दो लोगों ने"*

अब वह खड़े होकर कहेंगे कि यह लोग हमारा हक़ तल्फ़ कर रहे हैं, इन्होंने वसीयत के अन्दर ख्यानत की है।

فَيُقْسِمٰنِ بِاللّٰهِ لَشَهَادَتُنَآ اَحَقُّ مِنْ شَهَادَتِهِمَا — *"पस वह दोनों अल्लाह की क़सम खायें कि हमारी गवाही ज़्यादा बरहक़ है इन दोनों की गवाही से"*

وَمَا اعْتَدَيْنَآ ۖ اِنَّآ اِذًا لَّمِنَ الظّٰلِمِيْنَ — *"और हमने कोई ज़्यादती नहीं की है, अगर ऐसा हो तो यक़ीनन हम ज़ालिमों में से होंगे।"*

आयत 108

ذٰلِكَ اَدْنٰٓى اَنْ يَّاْتُوْا بِالشَّهَادَةِ عَلٰى وَجْهِهَآ — *"यह तरीक़ेकार क़रीबतर है कि इससे लोग ठीक-ठीक शहादत पेश करें"*

اَوْ يَخَافُوْٓا اَنْ تُرَدَّ اَيْمَانٌۢ بَعْدَ اَيْمَانِهِمْ ۗ — *"या (कमसे कम) उन्हें खौफ़ रहे कि हमारी क़समें उनकी क़समों के बाद रद्द कर दी जायेंगी।"*

क्योंकि उन्हें मालूम होगा कि अगर हमने झूठी क़सम खा भी ली, और फिर अगर दूसरा फ़रीक़ भी क़सम खा गया, तो हमारा मंसूबा कामयाब नहीं होगा। लिहाज़ा वाह इसकी हिम्मत नहीं करेंगे।

وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاسْمَعُوْا ۗ — *"और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो और सुन रखो।"*

وَاللّٰهُ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ۧ — *"अल्लाह ऐसे नाफ़रमानों को हिदायत नहीं देता।"*

इस तरह का मामला सूरह अल नूर (आयात 6 से 9) में भी मज़कूर हुआ है कि अगर कोई शख्स अपनी बीवी को बदकारी करते हुए देखे और उसके पास कोई और गवाह ना हो तो वह चार मरतबा क़सम खा कर कहे कि मैं जो कह रहा हूँ सच कह रहा हूँ। तो उस एक शख्स की गवाही चार गवाहों के बराबर हो जायेगी। लेकिन फिर अल्लाह तआला ने इसका जवाब भी बताया है, कि अगर बीवी भी चार मरतबा क़सम खा कर कह दे कि यह झूठ बोल रहा है, मुझ पर तोहमत लगा रहा है और पाँचवी मरतबा यह कहे कि मुझ पर अल्लाह का ग़ज़ब टूटे अगर इसका इल्ज़ाम दुरुस्त हो, तो शौहर की गवाही साक़ित हो जायेगी। इस तरह दोनों तरफ़ से अल्लाह तआला ने मामले को मुतवाज़िन किया है।

अब आखरी दो रुकूअ इस लिहाज़ से अहम हैं कि इनमें अल्लाह तआला के साथ हज़रत मसीह अलै० के मकालमे (बात-चीत) का नक़्शा खींचा गया है, जो क़यामत के दिन होगा। और इसके पसमंज़र में गोया एक पूरी दास्तान है, जो एक नयी शान से सामने सामने आयी है।

आयात 109 से 115 तक

يَوْمَ يَجْمَعُ اللّٰهُ الرُّسُلَ فَيَقُوْلُ مَاذَآ اُجِبْتُمْ ۖ قَالُوْا لَا عِلْمَ لَنَا ۭ اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوْبِ ۝ اِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ اذْكُرْ نِعْمَتِيْ عَلَيْكَ وَعَلٰي وَالِدَتِكَ ۘ اِذْ اَيَّدْتُّكَ بِرُوْحِ الْقُدُسِ ۭ تُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا ۚ وَاِذْ عَلَّمْتُكَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ ۚ وَاِذْ تَخْلُقُ مِنَ الطِّيْنِ كَهَيْـَٔةِ الطَّيْرِ بِاِذْنِيْ فَتَنْفُخُ

فِيْهَا فَتَكُوْنُ طَيْرًا بِاِذْنِيْ وَتُبْرِئُ الْاَكْمَهَ وَالْاَبْرَصَ بِاِذْنِيْ ۚ وَاِذْ تُخْرِجُ الْمَوْتٰى
بِاِذْنِيْ ۚ وَاِذْ كَفَفْتُ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ عَنْكَ اِذْ جِئْتَهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ فَقَالَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا
مِنْهُمْ اِنْ هٰذَآ اِلَّا سِحْرٌ مُّبِيْنٌ ○ وَاِذْ اَوْحَيْتُ اِلَى الْحَوَارِيّٖنَ اَنْ اٰمِنُوْا بِيْ
وَبِرَسُوْلِيْ ۚ قَالُوْٓا اٰمَنَّا وَاشْهَدْ بِاَنَّنَا مُسْلِمُوْنَ ○ اِذْ قَالَ الْحَوَارِيُّوْنَ يٰعِيْسَى ابْنَ
مَرْيَمَ هَلْ يَسْتَطِيْعُ رَبُّكَ اَنْ يُّنَزِّلَ عَلَيْنَا مَآئِدَةً مِّنَ السَّمَآءِ ۭ قَالَ اتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ
كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ○ قَالُوْا نُرِيْدُ اَنْ نَّاْكُلَ مِنْهَا وَتَطْمَىِٕنَّ قُلُوْبُنَا وَنَعْلَمَ اَنْ قَدْ
صَدَقْتَنَا وَنَكُوْنَ عَلَيْهَا مِنَ الشّٰهِدِيْنَ ○ قَالَ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ اللّٰهُمَّ رَبَّنَآ
اَنْزِلْ عَلَيْنَا مَآئِدَةً مِّنَ السَّمَآءِ تَكُوْنُ لَنَا عِيْدًا لِّاَوَّلِنَا وَاٰخِرِنَا وَاٰيَةً مِّنْكَ ۚ
وَارْزُقْنَا وَاَنْتَ خَيْرُ الرّٰزِقِيْنَ ○ قَالَ اللّٰهُ اِنِّيْ مُنَزِّلُهَا عَلَيْكُمْ ۚ فَمَنْ يَّكْفُرْ بَعْدُ
مِنْكُمْ فَاِنِّيْٓ اُعَذِّبُهٗ عَذَابًا لَّآ اُعَذِّبُهٗٓ اَحَدًا مِّنَ الْعٰلَمِيْنَ ○

आयत 109

يَوْمَ يَجْمَعُ اللّٰهُ الرُّسُلَ فَيَقُوْلُ مَاذَآ اُجِبْتُمْ ۭ

"(उस दिन का तसव्वुर करो) जिस दिन अल्लाह तआला तमाम रसूलों को जमा करेगा और पूछेगा आप लोगों को क्या जवाब मिला था?"

आप लोगों की दावत के जवाब में आपकी क़ौमों ने आपके साथ क्या मामला किया था?

قَالُوْا لَا عِلْمَ لَنَا ۭ اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوْبِ ○

"वह कहेंगे कि हमें कुछ मालूम नहीं; तू ही बेहतर जानने वाला है ग़ैब की बातों का।"

वह अल्लाह तआला के जनाब में ज़बान खोलने से गुरेज़ करेंगे और कहेंगे कि तू तमाम पोशीदा बातों को जानने वाला है, हर हक़ीक़त तुझ पर मुन्कशिफ़ है।

आयत 110

اِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ

"जब कहेगा अल्लाह तआला ऐ ईसा अलै० इब्ने मरयम"

अब रोज़े क़यामत हज़रत ईसा अलै० की ख़ास पेशी का मंज़र है। दुनिया में उनकी परस्तिश की गयी, उनको अल्लाह का बेटा बनाया गया, सालिसु सलासा क़रार दिया गया। लिहाज़ा अब आँजनाब अलै० को अल्लाह तआला के सामने जो शर्मिंदगी उठानी पड़ेगी, उसका नक़्शा खींचा जा रहा है जब अल्लाह उनको मुख़ातिब करके फ़रमायेगा कि ऐ ईसा अलै० इब्ने मरयम:

اذْكُرْ نِعْمَتِيْ عَلَيْكَ وَعَلٰى وَالِدَتِكَ

"ज़रा मेरे उन ईनामात को याद करो जो तुम पर और तुम्हारी वालिदा पर हुए।"

اِذْ اَيَّدْتُّكَ بِرُوْحِ الْقُدُسِ ۭ

"जबकि मैंने तुम्हारी मदद की रूहुल क़ुदुस से"

जिब्राइल अलै० के ज़रिये से तुम्हारी ताइद की।

تُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا ۚ

"तुम गुफ्तुगू करते थे लोगों के साथ पिन्घोड़े में भी और बड़ी उम्र को पहुँच कर भी।"

तुम शीर ख्वारगी (शिशु) की उम्र में भी लोगों से गुफ्तुगू करते थे और अधेड़ उम्र को पहुँच कर भी। आगे वही सूरह आले इमरान (आयत 48) वाले अल्फ़ाज़ दोहराये जा रहे हैं।

وَاِذْ عَلَّمْتُكَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ ۚ

"और (याद करो मेरे उस अहसान को) जबकि मैंने तुम्हें सिखाई किताब और हिकमत, यानि तौरात और इन्जील।"

दरमियान का वाव तफ़सीरिया है, लिहाज़ा "यानि" के मफ़हूम में आयेगा।

وَاِذْ تَخْلُقُ مِنَ الطِّيْنِ كَهَيْـَٔةِ الطَّيْرِ بِاِذْنِيْ

"और (याद करो) जब तुम बनाते थे गारे से परिन्दे की एक शक्ल, मेरे हुक्म से"

فَتَنْفُخُ فِيْهَا فَتَكُوْنُ طَيْرًا بِاِذْنِيْ

"फिर तुम उसमें फूँक मारते थे तो वह एक उड़ने वाला परिंदा बन जाता था मेरे हुक्म से"

وَتُبْرِئُ الْاَكْمَهَ وَالْاَبْرَصَ بِاِذْنِيْ

"और तुम अच्छा कर देते थे मादरज़ाद अंधे को और कोढ़ी को मेरे हुक्म से।"

وَاِذْ تُخْرِجُ الْمَوْتٰى بِاِذْنِيْ

"और जब तुम मुर्दों को निकाल खड़ा करते थे मेरे हुक्म से।"

وَاِذْ كَفَفْتُ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ عَنْكَ

"और (याद करो मेरे उस अहसान को भी) जब मैंने बनी इसराइल के हाथ रोक दिये तुमसे"

उनके हाथ तुम तक नहीं पहुँचने दिये और तुम्हें उनके शर से महफ़ूज़ रखा। यह उसी वाक़िये की तरफ़ इशारा है कि हज़रत मसीह अलै० गिरफ़्तार नहीं हुए, और ऐन उस वक़्त जब पुलिस वाले आप अलै० को गिरफ़्तार करने के लिये बाग़ में दाख़िल हुए तो चार फ़रिश्ते उतरे, जो आप अलै० को लेकर आसमान पर चले गये।

اِذْ جِئْتَهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ فَقَالَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ اِنْ هٰذَآ اِلَّا سِحْرٌ مُّبِيْنٌ

"जबकि तुम आये उनके पास खुले मौज्ज़ात के साथ तो कहा उन लोगों ने जो उनमें से काफ़िर थे कि यह तो सरीह जादू के सिवा कुछ नहीं है।"

आयत 111

وَاِذْ اَوْحَيْتُ اِلَى الْحَوَارِيّٖنَ

"और (याद करो मेरे अहसान को) जब मैंने इशारा किया हवारियों को"

اَنْ اٰمِنُوْا بِيْ وَبِرَسُوْلِيْ

"कि ईमान लाओ मुझ पर और मेरे रसूल पर।"

उनके दिल में डाल दिया, इल्हाम कर दिया, उनकी तरफ़ वही कर दी। यह वहिये ख़फ़ी है। ज़ाहिर है हवारियों की तरफ़ वहिये जली तो नहीं आ सकती थी जो खास्सा-ए-नबुवत है। लेकिन जैसा कि शहद की मक्खी के लिये वही का लफ्ज़ आया है (अल् नहल:68) या जैसे अल्लाह तआला ने आसमानों को वही की (फ़ुसिलत:12) यह वहिये ख़फ़ी की मिसालें हैं।

قَالُوْٓا اٰمَنَّا وَاشْهَدْ بِاَنَّنَا مُسْلِمُوْنَ

"तो उन्होंने कहा हम ईमान लाये और (ऐ ईसा अलै० आप भी) गवाह रहिये कि हम अल्लाह के फ़रमाबरदार हैं।"

आयत 112

اِذْ قَالَ الْحَوَارِيُّوْنَ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ

"और (ज़रा याद करो उस वाक़िये को) जब हवारियों ने कहा कि ऐ ईसा इब्ने मरयम"

هَلْ يَسْتَطِيْعُ رَبُّكَ اَنْ يُّنَزِّلَ عَلَيْنَا مَآئِدَةً مِّنَ السَّمَآءِ

"क्या आपके रब को यह क़ुदरत हासिल है कि हम पर आसमान से एक दस्तरख्वान उतारे?"

قَالَ اتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ

"(जवाब में ईसा अलै० ने) कहा अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो अगर तुम ईमान रखते हो।"

मोमिनीन को ऐसी दुआएँ नहीं करनी चाहिये। ऐसे मुतालबात आप लोगों को ज़ेब नहीं देते।

आयत 113

قَالُوْا نُرِيْدُ اَنْ نَّاْكُلَ مِنْهَا وَتَطْمَئِنَّ قُلُوْبُنَا

"उन्होंने कहा कि हम चाहते हैं कि हम उस (ख्वान) में से खायें और हमारे दिल बिल्कुल मुत्मईन हो जायें"

यह इस तरह की बात है जैसी हज़रत इब्राहीम अलै० ने कही थी (अल् बक़रह:260): { رَبِّ اَرِنِيْ كَيْفَ تُحْيِ الْمَوْتٰى }। इसी तरह का मुशाहिदा वह भी तलब कर रहे थे।

وَنَعْلَمَ اَنْ قَدْ صَدَقْتَنَا وَنَكُوْنَ عَلَيْهَا مِنَ الشّٰهِدِيْنَ ﴿۱۱۳﴾

"और हमें मालूम हो जाये कि आप अलै० ने जो कुछ हमसे कहा वह सच है और हम उस पर गवाह बन जायें।"

ताकि हमें आप अलै० की किसी बात में शक व शुबह की कोई गुंज़ाइश ना रहे और ऐसा यक़ीने कामिल हो जाये कि फिर हम जब आप अलै० की जानिब से लोगों को तब्लीग करें तो हमारे अपने दिलों में कहीं शक व शुबह का कोई काँटा चुभा हुआ ना रह जाये।

आयत 114

قَالَ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ اللّٰهُمَّ رَبَّنَآ اَنْزِلْ عَلَيْنَا مَآئِدَةً مِّنَ السَّمَآءِ

"इस पर ईसा अलै० इब्ने मरयम ने दुआ की: ऐ अल्लाह, ऐ हमारे रब, उतार दे हम पर एक दस्तरख्वान आसमान से"

تَكُوْنُ لَنَا عِيْدًا لِّاَوَّلِنَا وَاٰخِرِنَا وَاٰيَةً مِّنْكَ

"जो ईद बन जाये हमारे लिये और हमारे अगलों और पिछलों के लिये, और एक निशानी हो तेरी तरफ़ से।"

आसमान से, ख़ास तेरे यहाँ से खाने से भरे हुए दस्तरख्वान का नाज़िल होना यक़ीनन हमारे लिये जश्न का मौक़ा होगा, हमारे अगलों-पिछलों के लिये एक यादगार वाक़िया और तेरी तरफ़ से एक ख़ास निशानी होगा।

وَارْزُقْنَا وَاَنْتَ خَيْرُ الرّٰزِقِيْنَ ﴿۱۱۴﴾

"और हमें रिज़्क़ अता फ़रमा और यक़ीनन तू बेहतरीन रिज़्क़ देने वाला है।"

आयत 115

قَالَ اللّٰهُ اِنِّيْ مُنَزِّلُهَا عَلَيْكُمْ

"अल्लाह ने इरशाद फ़रमाया (ठीक है) मैं नाज़िल कर दूँगा उसको तुम पर।"

فَمَنْ يَّكْفُرْ بَعْدُ مِنْكُمْ فَاِنِّيْٓ اُعَذِّبُهٗ عَذَابًا لَّآ اُعَذِّبُهٗٓ اَحَدًا مِّنَ الْعٰلَمِيْنَ ﴿۱۱۵﴾

"लेकिन फिर उसके बाद तुम में से जो कोई कुफ़्र की रविश इख़्तियार करेगा तो फिर उसको मैं अज़ाब भी वह दूँगा जो तमाम जहानों में से किसी और को नहीं दूँगा।"

यानि जब इस तरह की कोई खर्क़े आदत चीज़ दिखा दी जायेगी, खुला मौज्ज़ा सामने आ जायेगा तो फिर रिआयत नहीं होगी। गुज़िश्ता क़ौमों के साथ ऐसे ही हुआ था। क़ौमे समूद ने हज़रत सालेह अलै० से मुतालबा किया कि अभी इस चट्टान में से एक हामिला ऊँटनी बरामद हो जानी चाहिये। वह ऊँटनी बरामद हो गयी, लेकिन साथ ही रिआयत भी ख़त्म हो गयी। उनसे वाज़ेह तौर पर कह दिया गया कि अब तुम्हारे लिये मोहलत के सिर्फ़ चंद दिन हैं, अगर इन दिनों में ईमान नहीं लाओगे तो नेस्तो नाबूद कर दिये जाओगे। यह बात सूरह शौअरा में बहुत तफ़सील से आयेगी कि ऐ नबी ﷺ यह लोग अब जो निशानियाँ माँग रहे हैं तो हम यह इनकी खैर-ख्वाही में इन्हें नहीं दिखा रहे हैं। अगर इनके कहने पर ऐसी निशानियाँ हम दिखा दें तो फिर इनको मज़ीद रिआयत नहीं दी जायेगी और इनकी मोहलत अभी ख़त्म हो जायेगी। इस क़िस्म के मौज्ज़े देख कर ना कोई पहले ईमान लाया, ना अब यह लोग लायेंगे। इनके अन्दर जो नीयत का फ़साद

है वह कहाँ इन्हें मानने देगा? जैसे क़ौमे सालेह अलै० ने नहीं माना, हालाँकि अपनी निगाहों के सामने उन्होंने ऐसा खुला मौज्ज़ा देख लिया था। हज़रत ईसा अलै० के मौज्ज़ों को यहूदियों ने नहीं माना, उल्टा उन्हें जादू क़रार दे दिया। तो इस क़दर वाज़ेह मौज्ज़ात देख कर भी लोग ईमान नहीं लाये। सिवाय उन जादूगरों के जिनका फिरऔन के दरबार में हज़रत मूसा अलै० से मुक़ाबला हुआ था। ना तो ख़ुद फिरऔन ईमान लाया था ना फिरऔन के दरबारी और ना ही अवामुन्नास। चुनाँचे मौज्ज़े का ज़हूर दरअसल मुतल्लक़ा क़ौम के ख़िलाफ़ जाता है। मौज्ज़े के ज़हूर से पहले तो उम्मीद होती है कि अल्लाह तआला शायद इस क़ौम को कुछ ढील दे दे, शायद कुछ और लोगों को ईमान की तौफ़ीक़ मिल जाये, लेकिन मौज्ज़े के ज़हूर से मोहलत का वह सिलसिला ख़त्म हो जाता है।

आयात 116 से 120 तक

وَاِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ ءَاَنْتَ قُلْتَ لِلنَّاسِ اتَّخِذُوْنِيْ وَاُمِّيَ اِلٰهَيْنِ مِنْ
دُوْنِ اللّٰهِ ؕ قَالَ سُبْحٰنَكَ مَا يَكُوْنُ لِيْٓ اَنْ اَقُوْلَ مَا لَيْسَ لِيْ ۢ بِحَقٍّ ؕ اِنْ كُنْتُ قُلْتُهٗ
فَقَدْ عَلِمْتَهٗ ؕ تَعْلَمُ مَا فِيْ نَفْسِيْ وَلَآ اَعْلَمُ مَا فِيْ نَفْسِكَ ؕ اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ
الْغُيُوْبِ ۝ مَا قُلْتُ لَهُمْ اِلَّا مَآ اَمَرْتَنِيْ بِهٖٓ اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ رَبِّيْ وَرَبَّكُمْ ۚ وَكُنْتُ
عَلَيْهِمْ شَهِيْدًا مَّا دُمْتُ فِيْهِمْ ۚ فَلَمَّا تَوَفَّيْتَنِيْ كُنْتَ اَنْتَ الرَّقِيْبَ عَلَيْهِمْ
ؕ وَاَنْتَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ شَهِيْدٌ ۝ اِنْ تُعَذِّبْهُمْ فَاِنَّهُمْ عِبَادُكَ ۚ وَاِنْ تَغْفِرْ لَهُمْ
فَاِنَّكَ اَنْتَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ۝ قَالَ اللّٰهُ هٰذَا يَوْمُ يَنْفَعُ الصّٰدِقِيْنَ صِدْقُهُمْ ؕ لَهُمْ
جَنّٰتٌ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ؕ رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوْا عَنْهُ ؕ
ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ۝ لِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا فِيْهِنَّ ؕ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ
شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝

अब इस पेशी का आखरी मंज़र है और इसका अंदाज़ बहुत सख्त है।

आयत 116

وَاِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ ءَاَنْتَ قُلْتَ لِلنَّاسِ اتَّخِذُوْنِيْ وَاُمِّيَ اِلٰهَيْنِ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ ؕ

"और जब अल्लाह कहेगा कि ऐ मरयम के बेटे ईसा! क्या तुमने कहा था लोगों से कि मुझे और मेरी माँ दोनों को मअबूद बना लेना, अल्लाह के सिवा?"

قَالَ سُبْحٰنَكَ مَا يَكُوْنُ لِيْٓ اَنْ اَقُوْلَ مَا لَيْسَ لِيْ ۢ بِحَقٍّ ؕ

"वह (जवाब में) अर्ज़ करेंगे (ऐ अल्लाह) तू पाक है, मेरे लिये कैसे रवा था कि मैं वह बात कहता जिसके कहने का मुझे कोई हक़ नहीं।"

اِنْ كُنْتُ قُلْتُهٗ فَقَدْ عَلِمْتَهٗ ؕ

"अगर मैंने वह बात कही होती तो वह तेरे इल्म में होती।"

تَعْلَمُ مَا فِيْ نَفْسِيْ وَلَآ اَعْلَمُ مَا فِيْ نَفْسِكَ ؕ اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوْبِ ۝

"तू तो जनता है जो कुछ मेरे जी में है और मैं नहीं जनता जो तेरे जी में है। यक़ीनन तमाम पोशीदा हक़ीक़तों का जानने वाला तो बस तू ही है।"

आयत 117

مَا قُلْتُ لَهُمْ اِلَّا مَآ اَمَرْتَنِيْ بِهٖٓ

"मैंने उनसे कुछ नहीं कहा मगर वही कुछ जिसका तूने मुझे हुक्म दिया था"

"(और वह यही बात थी) कि बंदगी करो अल्लाह की जो मेरा भी रब है और तुम्हारा भी रब है।" اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ رَبِّیْ وَرَبَّكُمْ ۚ

"और मैं उन पर निगरान रहा जब तक उनमें मौजूद रहा।" وَ كُنْتُ عَلَيْهِمْ شَهِيْدًا مَّا دُمْتُ فِيْهِمْ ۚ

उनकी देखभाल करता रहा, निगरानी करता रहा। यहाँ लफ्ज "शहीद" निगरान के मायनों में आया है।

"फिर जब तूने मुझे उठा लिया तो (इसके बाद) तू ही निगरान था उन पर" فَلَمَّا تَوَفَّيْتَنِیْ كُنْتَ اَنْتَ الرَّقِيْبَ عَلَيْهِمْ ؕ

वाज़ेह रहे कि यहाँ भी تَوَفَّيْتَنِیْ मौत के मायनों में नहीं है। इस सिलसिले में सूरह आले इमरान आयत 55 {اِنِّیْ مُتَوَفِّيْكَ } की तशरीह मद्देनज़र रहे।

"और यक़ीनन तू हर चीज़ पर गवाह है।" وَاَنْتَ عَلٰى كُلِّ شَیْءٍ شَهِيْدٌ ۝۱۱۷

तू हर चीज़ पर निगरान है, हर चीज़ से बाखबर है।

आयत 118

"अब अगर तू इन्हें अज़ाब दे तो यह तेरे ही बन्दे हैं।" اِنْ تُعَذِّبْهُمْ فَاِنَّهُمْ عِبَادُكَ ۚ

तुझे इन पर पूरा इख़्तियार हासिल है, तेरी मख्लूक़ हैं।

"और अगर तू इन्हें बख्श दे तो तू ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।" وَاِنْ تَغْفِرْ لَهُمْ فَاِنَّكَ اَنْتَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ۝۱۱۸

यह बेहतरीन अंदाज़ है। माफ़ी की दरख्वास्त भी है, जिसमें बहुत ख़ूबसूरत अंदाज़ में शफक्क़त व राफ़त का इज़हार है, जो नौए इंसानी के लिये अम्बिया की शख्सियत का खास्सा है। लेकिन इससे आगे बढ़ कर कुछ नहीं कह सकते कि मक़ामे अबदियत यही है। तो ऐ अल्लाह! तेरा ही इख़्तियार है और तू अज़ीज़ भी है और हकीम भी। अगर तू इन्हें माफ़ फ़रमाना चाहे तो तुझसे कोई बाज़पुर्स नहीं कर सकता, कोई जवाब तलबी नहीं कर सकता कि तूने कैसे माफ़ कर दिया! अब आ रहा है कि इस पूरी पेशी का ड्राप सीन और आखरी नक़्शा क्या होगा।

आयत 119

"अल्लाह फ़रमायेगा यह आज का दिन वह है जिस दिन सच्चों को उनकी सच्चाई फायदा पहुँचायेगी।" قَالَ اللّٰهُ هٰذَا يَوْمُ يَنْفَعُ الصّٰدِقِيْنَ صِدْقُهُمْ ؕ

उनका सच और सिद्क़ उनके हक़ में मुफ़ीद होगा।

"उनके लिये बाग़ात हैं जिनके दामन में नदियाँ बहती होंगी, वह उनमे हमेशा-हमेशा रहेंगे।" لَهُمْ جَنّٰتٌ تَجْرِیْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَاۤ اَبَدًا ؕ

"अल्लाह उनसे राज़ी हो गया और वह अल्लाह से राज़ी हो गये। यही है बड़ी कमयाबी।" رَضِیَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوْا عَنْهُ ؕ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ۝۱۱۹

यह है बाहमी रज़ामंदी का आखरी मक़ाम, अल्लाह उनसे राज़ी और वह अल्लाह से राज़ी।

आयत 120

“अल्लाह ही के लिये है आसमानों और ज़मीन और जो कुछ इनमें है, सबकी बादशाही।”	لِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا فِيْهِنَّ
“और वह हर चीज पर क़ादिर है।”	وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ۠

यहाँ पर अल्लाह तआला के फ़ज़ल से सूरतुल मायदा के इख्तताम के साथ ही मक्की और मदनी सूरतों के ग्रुप्स (groups) में से पहला ग्रुप ख़त्म हो गया है, जिसमें एक मक्की सूरत यानि सूरतुल फ़ातिहा और चार मदनी सूरतें हैं। सूरतुल फ़ातिहा अगरचे हज्म में बहुत छोटी है लेकिन यह अपनी मायनवी अज़मत के लिहाज़ से पूरे क़ुरान के हमवज़न है। सूरतुल हिज्र की आयत 87: {وَلَقَدْ اٰتَيْنٰكَ سَبْعًا مِّنَ الْمَثَانِيْ وَالْقُرْاٰنَ الْعَظِيْمَ} मुफ़स्सिरीन की राय के मुताबिक़ सूरतुल फ़ातिहा ही के बारे में है। इस ग्रुप की चार मदनी सूरतें अल् बक़रह, आले इमरान, अन्निसा और अल् मायदा दो-दो के जोड़ों की शक्ल में हैं। इन तमाम सूरतों के मज़ामीन का उमूद एक दफ़ा फिर ज़हन में ताज़ा कर लें। मुकम्मल शरीअते आसमानी, अहले किताब से ख़िताब और रद्दो-कदा, उन पर इल्ज़ामात का तज़किरा, उनके ग़लत अक़ाइद की नफ़ी, उन्हें ईमान की दावत, उनकी तारीख के अहम वाक़िआत की तफ़सीलात, उनका उम्मते मुस्लिमा के मंसब से माज़ूल किया जाना, जिस पर वह दो हज़ार बरस से फ़ाइज़ थे और उम्मते मुहम्मद ﷺ का इस मंसब पर फ़ाइज़ किया जाना। यह मौज़ूआत आखरी दर्जे में इस ग्रुप की सूरतों में मुकम्मल हो गये हैं।

بارک اللہ لی ولکم فی القرآن العظیم ونفعنی وایاکم بالآیات والذکر الحکیم۔